संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
१ जून २०१०
वर्ष : १९ अंक : १२
(निरंतर अंक : २१०)

एक भरोसा,
एक आस,
एक विश्वास...

नश्वर का भरोसा, नश्वर की आस, नश्वर का विश्वास विनाश की तरफ ले जाता है। शाश्वत आत्मा-परमात्मा का भरोसा, उसीको पाने की आस और उसी पर विश्वास उसीमें मिला देता है।

परम पूज्य
संत श्री आसारामजी

हृदय हुआ है पावन, धन्य हुआ है जीवन। पुलकित हुआ है तन-मन, जब किया गुरु का सुमिरन ॥

हरिनाम-संकीर्तन की सुवास फैलाते साधक-वृंद

घाटकोपर (मुंबई) सोनीपत (हरि.)

भरतपुर (राज.) कोटा (राज.)

विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविरों में सफलता की कुंजियाँ पाते नौनिहाल

बागलकोट (कर्नाटक) गोरेगाँव (महा.)

देवास (म.प्र.) जम्मू

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू, कन्नड़, अंग्रेजी व सिंधी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : १९ अंक : १२
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २१०)
१ जून २०१० मूल्य : रु. ६-००
ज्येष्ठ-आषाढ़ वि.सं. २०६७

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक	: रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक	: रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक	: रु. २२५/-
(४) आजीवन	: रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में (सभी भाषाएँ)

(१) वार्षिक	: रु. ३००/-
(२) द्विवार्षिक	: रु. ६००/-
(३) पंचवार्षिक	: रु. १५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक	: US $ 20
(२) द्विवार्षिक	: US $ 40
(३) पंचवार्षिक	: US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	७०	१३५	३२५
अन्य देशों में	US$20	US$40	US$80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता

'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुजरात).
फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

इस अंक में...

एक भरोसा, एक आस, एक विश्वास...

- पूज्य बापूजी

सच्चिदानंदरूपाय विश्वोत्पत्त्यादिहेतवे ।
तापत्रयविनाशाय श्रीकृष्णाय वयं नुमः ॥

जो सत् है, जो चित् है, जो आनंदस्वरूप है उस पूर्ण परमात्मा का भरोसा, उसीकी आस, उसीका विश्वास... ! पूर्ण की आस पूर्ण कर देगी, पूर्ण का भरोसा पूर्णता में ला देगा, पूर्ण का विश्वास पूर्णता प्रदान कर देगा। नश्वर की आस, नश्वर का भरोसा, नश्वर का विश्वास नाश करता रहता है।

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास ।

संत तुलसीदासजी कहते हैं कि एक भगवान का ही भरोसा, भगवान को पाने की ही आस और परम मंगलमय भगवान ही हमारे हितकारी हैं, ऐसा विश्वास हमें निर्दुःख, निश्चिंत, निर्भीक बना देता है। जगत का भरोसा, जगत की आस, जगत का विश्वास हमें जगत में उलझा देता है । भरोसा, आस और विश्वास मिटता नहीं, यह तो रहता है लेकिन जो इसे नश्वर से हटाकर शाश्वत में ला देता है वह धनभागी हो जाता है ।

चहौं न सुगति, सुमति, संपति कछु,
रिधि-सिधि बिपुल बड़ाई ।
यह बिनती रघुबीर गुसाईं ।
और आस-बिस्वास-भरोसो,
हरो जीव-जड़ताई ॥

नश्वर चीजों की आस, नश्वर चीजों का भरोसा, नश्वर चीजों का विश्वास यह जीवात्मा की जड़ता है । हे प्रभु ! आप शाश्वत हैं, हमारे आत्मा होकर बैठे हैं । आप पर विश्वास, आपका भरोसा और आपकी आस छोड़कर जो वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति, संबंध, सम्पदा पहले नहीं थी, बाद में नहीं रहेगी और अब भी बदल रही है उन्हींकी आस, विश्वास और भरोसा करना यह हमारी जड़ता है । इस जड़ता को हर लो महाराज, बस ।

नश्वर चीजों की आशा है - 'पेंशन आयेगी फिर आराम से भजन करूँगा ।' हे भैया ! आराम तो अपने राम में है । सुविधाजन्य भजन तेरे को खोखला बना देगा । पेंशन का आधार, मित्र का आधार, कुटिया का आधार, वातावरण का आधार तेरे को खोखला बना देगा ।

मैंने भी यह गलती की थी । गुरुजी ने आज्ञा दी कि 'डीसा में जाकर रहो ।' जहाँ कुटिया थी उसके आसपास में झोंपड़पट्टी थी । एक दिन भी रहने की इच्छा नहीं होती थी । कुछ दिन रहा, फिर गुरुजी को चिट्ठी लिखी कि 'कृपा करके आज्ञा प्रदान करें कि मैं नर्मदा-किनारे मेरे मित्र संत की गुफा है, वहाँ स्वतंत्रता से रहके अनुष्ठान आदि आराम से कर सकता हूँ, मैं वहाँ रहूँ ?'

गुरुजी ने उत्तर भेजा कि 'वहीं रहो ।' महीना-दो महीना खींचा, मन को सँभालके फिर चिट्ठी लिखी : 'हे गुरुदेव ! आपको न कहूँगा तो किसको कहूँगा । मेरे मन में आता है कि कुटिया को और बाउन्ड्री को ताला लगाकर चाबियाँ बाउन्ड्री में फेंककर नर्मदा-किनारे भाग जाऊँ । वहाँ शांति है, एकांत है और तपस्या-भूमि है । यहाँ झोंपड़पट्टी के बच्चे दिन-रात चिल्लाते रहते हैं, आपस में गालियाँ बोलते और दीवालों पर भी लिखते रहते हैं ।' गुरुजी ने कहा : 'गालियाँ निकालते हैं तो वे तो आकाश में चली गयीं, रात को कुत्ते भौंकते हैं

तो 'ॐ ॐ' बोलते हैं - ऐसी भावना क्यों नहीं करते ! बैठे रहो वहीं !'

सात साल वहाँ निकाले और गुरुदेव ने ऐसा पक्का, मजबूत बना दिया कि हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि इतनी भीड़, बाहर की इतनी प्रवृत्ति के अंदर भी निर्लेप नारायण की आस, भरोसा, विश्वास पर मौज-ही-मौज, आनंद-ही-आनंद है ।

हम अपनी मान्यता की आशा रखते हैं, अपनी चीज-वस्तु, बुद्धिमत्ता का भरोसा रखते हैं, अपने मित्र-संबंधियों पर भरोसा रखते हैं लेकिन वे सब बेचारे, बेचारे ही हैं । एक आस, एक भरोसा, एक विश्वास परमात्मा का रखो ।

संत तुलसीदासजी कहते हैं कि और देवियों की पूजा करो तो खुश होती हैं लेकिन आशा देवी की पूजा छोड़ने से आप पूर्ण सुखी हो जाते हैं ।

आशा देवी की पूजा छोड़ दो, आशा देवी का भरोसा छोड़ दो, आशा का विश्वास न करो, आशाओं के दास न बनो, आशा के राम बन जाओ बस !

आशा तो एक राम की, और आस निराश ।

अगर मिले तो राम मिले, और मिला तो क्या मिला ! मिलकर बिछड़ जायेगा । यह जीव की जड़ता ही है कि आशा छोड़ नहीं सकता । कहीं-न-कहीं विश्वास तो रखना ही पड़ता है, किसी-न-किसी पर भरोसा रखना ही पड़ता है तो रखिये भरोसा प्रकृति से परे उस परमात्मा पर ।

असंगो ह्ययं पुरुषः ।

आप उसीकी आस, उसीका भरोसा और उसीमें विश्वास करते हो तो जैसी आस, जैसा भरोसा, जैसा विश्वास रखते हैं और जैसा आपका भाव होता है, वह सत्-चित्-आनंदघन परमात्मा उसी रूप में आपके आगे लीला करके आपको संतुष्ट कर सकते हैं । परंतु आप अपना आग्रह छोड़िये कि 'ठाकुरजी ! आप ऐसे रूप में मिलो, वैसे रूप में मिलो...।' नहीं, आप तो प्रार्थना करो : 'महाराज ! तुम कैसे हो यह हम नहीं जानते लेकिन हम कैसे हैं तुम जानते हो । **मम हृदय भवन प्रभु तोरा ।** मेरा हृदय तो तेरा भवन है मेरे परमेश्वर ! तू सत् है, तू चित् है, तू आनंदस्वरूप है यह हम जानते नहीं हैं, शास्त्र और महापुरुषों के वचनों से मानते हैं ।

जगत की ऐसी वस्तु मिलेगी, ऐसा निवास मिलेगा, ऐसा एकांत मिलेगा, ऐसी साधना मिलेगी तब मैं भजन करूँगा - यह मेरी आशा हर लो महाराज ! आप सर्वत्र हो, हर हाल में हो ।'

स्वामी रामतीर्थ ने उस परमेश्वर की महिमा को कुछ जानते हुए गुनगुनाया :

कोई हाल मस्त, कोई माल मस्त,
कोई तूती मैना सूए में ।
कोई खान मस्त, पहरान मस्त,
कोई राग रागिनी दोहे में ॥

'ऐसा हाल हो तब मैं सुखी होऊँगा'- यह भ्रम निकाल दो । 'इतनी माल-मिल्कियत होगी तब सुखी होंगे'- यह आशा भटकाती है । इन तुच्छ अवस्थाओं की आशा, विश्वास और भरोसा करके हम फँस जाते हैं । इनके बिना भी हम अपने-आपमें पूर्ण सुखी रह सकते हैं ।

नानकजी कहते हैं :

पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥
नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥

(सुखमनी साहिब)

कोई अवस्था अभी नहीं है, आयेगी तब हम सुखी होंगे तो आप नश्वर की आशा करते हैं, नश्वर पर भरोसा करते हैं, नश्वर पर विश्वास करते हैं ।

एक बार दरिया में जोरों का तूफान उठा । पालवाली नाव तरंगों में उछलने लगी । समुद्री तूफान को देख यात्रियों के प्राण कंठ में आ गये । अब क्या करें, किसकी आशा करें, किसका भरोसा

करें, किस पर विश्वास करें ? अब गये-अब गये, रोये-चीखे-चिल्लाये । यात्रियों में एक दूल्हा-दुल्हन भी थे । दुल्हन देख रही थी कि मेरे पति आकाश की ओर शांत भाव से देख रहे हैं ।

वह बोली : ''अजी ! ऐसी आँधी चल रही है, तूफान आ रहा है । अब क्या होगा, कोई पता नहीं । सब चीख रहे हैं, 'हे प्रभु ! बचाओ।' और आप निश्चिंत हो !''

दूल्हे ने म्यान में से तलवार निकाली और उसके गले पर रख दी । दुल्हन पति के सामने देखने लगी ।

पति बोला : ''तुझे डर नहीं लगता ? मौत तेरे सिर पर आ गयी है !''

''मैं क्यों डरूँगी ! तलवार है तो मेरी गर्दन पर लेकिन मेरे स्वामी के हाथ में है । यह तलवार मेरा क्या बिगाड़ेगी !''

''तेरा अपने स्वामी पर भरोसा है तो तू निश्चिंत है, तो मेरा भी मेरे स्वामी पर भरोसा है इसलिए मैं निश्चिंत हूँ । मेरे स्वामी पर मेरा विश्वास है कि जो करेंगे भले के लिए करेंगे । अगर यह नाव डुबाते हैं तो नया शरीर देना चाहेंगे, उसमें भी मेरा भला है और इसी जीवन में सत्संग-साधना में आगे बढ़ाना चाहेंगे तो नाव किनारे लगायेंगे । हमारे हाथ की बात तो नहीं है कि आँधी-तूफान को रोक दें लेकिन आशा, विश्वास और भरोसा उन्हींका है, उनको जो भी अच्छा लगेगा वे करेंगे ।''

एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास ।
एक राम घन स्याम हित चातक तुलसीदास ॥

(तुलसी दोहावली : २७७)

जैसे चातक की नजर एक ही जगह पर होती है, ऐसे ही हे प्रभु ! हमारी दृष्टि तुम पर रख दो । भगवान पर भरोसा करोगे तो क्या शरीर बीमार नहीं होगा, बूढ़ा नहीं होगा, मरेगा नहीं ? अरे भाई ! जब शरीर पर, परिस्थितियों पर भरोसा करोगे तो जल्दी बूढ़ा होगा, जल्दी अशांत होगा, अकाल भी मर सकता है । **भगवान पर भरोसा करोगे तब भी बूढ़ा होगा, मरेगा लेकिन भरोसा जिसका है देर-सवेर उससे मिलकर मुक्त हो जाओगे और भरोसा नश्वर पर है तो बार-बार नाश होते जाओगे ।** ईश्वर की आशा है तो उसे पाओगे व और कोई आशा है तो वहाँ भटकोगे । पतंगे का आस-विश्वास-भरोसा दीपज्योति के मजे पर है तो उसे क्या मिलता है ? परिणाम क्या आता है ? जल मरता है ।

मत कर रे गरव गुमान, गुलाबी रंग उड़ी जावेलो ।

इस बाहर के सौंदर्य पर, बाहर के धन पर, बाहर के प्रमाणपत्रों पर आस, विश्वास, भरोसा न रख, उस अंतर्यामी परमात्मा पर आस, विश्वास, भरोसा कर । तू तो तर जायेगा, तू तो 'उस'मय हो जायेगा और तेरे सम्पर्क में आनेवाले भी तर जायेंगे ।

एक आस, एक भरोसा, एक विश्वास... परमात्मा के ज्ञान में ही रहना और दूसरों को लगाना, आप प्रसन्न रहना और दूसरों को प्रसन्न करना - इस ईश्वरीय सिद्धांत में रहें ।

यह संसार तो ऐसा ही है, आप झूठ का, मिथ्या आरोप का, कपट का आश्रय लेते हैं, उस पर विश्वास रखते हैं तो देर-सवेर बेड़ा गर्क होता है परंतु सत्य का आश्रय लेते हैं, सत्यस्वरूप ईश्वर पर विश्वास रखते हैं, भरोसा रखते हैं तो आपकी नाव डोलेगी तो सही लेकिन डूबेगी नहीं । अगर वह डुबाकर भी पूरा करना चाहता है तो आपको दिव्य जीवन देने की उसकी व्यवस्था होगी क्योंकि आपने उसका भरोसा किया है । उसकी आस, उस पर विश्वास किया है । एक आस, एक भरोसा, एक विश्वास बस !

यह मत सोचो कि क्या खायेंगे, क्या होगा ? जब उसके लिए चल पड़े तो फिर क्या है !

(शेष पृष्ठ ८ पर)

निंदकों, कुप्रचारकों की खुल गयी पोल

महेन्द्र चावला के आरोपों की हकीकत

विदेशी षड्यंत्रकारियों का हत्था बनकर मीडिया में आश्रम के खिलाफ मनगढ़ंत आरोपों की झड़ी प्रचारित करनेवाले महेन्द्र चावला की न्यायाधीश श्री डी. के. त्रिवेदी जाँच आयोग के समक्ष पोल खुल गयी । चालबाज महेन्द्र ने वास्तविकता को स्वीकारते हुए उसने कहा कि **मैं अहमदाबाद आश्रम में जब-जब आया और जितना समय निवास किया, तब मैंने आश्रम में कोई तंत्रविद्या होते हुए देखा नहीं ।**

आश्रम में छुपे भोंयरे (गुप्त सुरंग) होने का झूठा आरोप लगानेवाले महेन्द्र ने सच्चाई को स्वीकारते हुए माना कि **यह बात सत्य है कि जिस जगह आश्रम का सामान रहता है अर्थात् स्टोर रूम है, उसे मैं 'भोंयरा' कहता था ।**

श्री नारायण साँई के नाम के नकली दस्तावेज बनानेवाले महेन्द्र ने स्वीकार किया कि **यह बात सत्य है कि कम्प्यूटर द्वारा किसी भी नाम का, किसी भी प्रकार का, किसी भी संस्था का तथा किसी भी साइज का लेटर हेड तैयार हो सकता है । बनावटी हस्ताक्षर किये गये हों, ऐसा मैं जानता हूँ ।**

महेन्द्र ने स्वीकार किया कि वह दिल्ली से दिनांक ५-८-०८ को हवाई जहाज द्वारा अहमदाबाद आया, जहाँ अविन वर्मा, वीणा चौहान व राजेश सोलंकी पहले से ही आमंत्रित थे । इन्होंने प्रेस कॉन्फरेंस द्वारा आश्रम के विरोध में झूठे आरोपों की झड़ी लगा दी थी । साधारण आर्थिक स्थितिवाला महेन्द्र अचानक हवाई जहाजों में कैसे उड़ने लगा ? यह बात षड्यंत्रकारियों के बड़े गिरोह से उसके जुड़े होने की पुष्टि करती है ।

महेन्द्र के भाइयों ने पत्रकारों को दिये इंटरव्यू में बताया : ''आर्थिक स्थिति ठीक न होने के बावजूद हमने उसकी पढ़ाई के लिए पानीपत में अलग कमरे की व्यवस्था की थी । उसकी आदतें बिगड़ गयीं । वह चोरियाँ भी करने लगा । एक बार वह घर से ७००० रुपये लेकर भाग गया था । उसने खुद के अपहरण का भी नाटक किया था और बाद में इस झूठ को स्वीकार कर लिया था ।

इसके बाद वह आश्रम में गया । हमने सोचा वहाँ जाकर सुधर जायेगा लेकिन उसने अपना स्वभाव नहीं छोड़ा । और अब तो धर्मांतरणवालों का हथकंडा बन गया है और कुछ-का-कुछ बक रहा है । उसे जरूर १०-१५ लाख रुपये मिले होंगे । नारायण साँई के बारे में उसने जो अनर्गल बातें बोली हैं वे बिल्कुल झूठी व मनगढ़ंत हैं ।''

महेन्द्र के भाइयों ने यह भी बताया : ''आश्रम से आने के बाद किसीके पैसे दबाने के मामले में महेन्द्र के खिलाफ एफ.आई.आर. भी दर्ज हुई थी । मार-पिटाई व झगड़ाखोरी उसका स्वभाव है । वास्तव में **महेन्द्र के साथ और भी लोगों का गैंग है और ये लोग ही 'मैं नारायण साँई बोल रहा हूँ, मैं फलाना बोल रहा हूँ... मैं यह कर दूँगा, वह कर दूँगा...' इस प्रकार दूसरों की आवाजें निकालके पता नहीं क्या-क्या साजिशें रच रहे हैं !''**

अंततः महेन्द्र चावला की भी काली करतूतों का पर्दाफाश हो ही गया । इस चालबाज साजिशकर्ता को उसके घर-परिवार के लोगों ने

तो त्याग ही दिया है, साथ ही समाज के प्रबुद्धजनों की दुत्कार का भी सामना करना पड़ रहा है। भगवान सबको सद्बुद्धि दें, सुधर जायें तो अच्छा है।

ऐसे विदेशियों के हथकंडे झूठे साबित हो ही रहे हैं। कोई जेल में हैं तो किसीको परेशानी ने घेर रखा है तो कोई प्रकृति के कोप का शिकार बन गये हैं। और उनके सूत्रधारों के खिलाफ उन्हींका समुदाय हो गया है। यह कुदरत की अनुपम लीला है। कई देशों में तथाकथित धर्म के ठेकेदारों द्वारा सैकड़ों बच्चों का यौन-शोषण कई वर्षों तक किया गया। गूँगे-बहरे, विकलांग बालकों का यौन-शोषण और वह भी इतने व्यापक पैमाने पर हुआ। उसका रहस्य प्रकृति ने खोल के रख दिया है (जिसका विवरण 'ऋषि प्रसाद' के पिछले अंक में प्रकाशित हुआ है)। ऐसी नौबत आयी कि साम, दाम, दंड, भेद आदि से भी विरोध न रुका। आखिरकार इन सूत्रधारों को जाहिर में माफी माँगनी पड़ी। पूरे यूरोप का वकील-समुदाय बालकों-किशोरों का यौन-शोषण करनेवालों के खिलाफ खड़ा हो गया। भारत को तोड़ने की साजिशें रचनेवाले अपने कारनामों की वजह से खुद ही टूट रहे हैं। पैसों के बल से न जाने क्या-क्या कुप्रचार करवाते हैं परंतु सूर्य को बादलों की कालिमा क्या ढकेगी और कब तक ढकेगी ? स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानंद, नरसिंह मेहता, स्वामी रामसुखदासजी आदि के खिलाफ इनकी साजिशें नाकामयाब रहीं। ऐसे ही अब भी नाकामयाबी के साथ कुदरत का कोप भी इनके सिर पर कहर बरसाने के लिए उद्यत हुआ है।

– डॉ. प्रे. खो. मकवाणा (एम.बी.बी.एस.)

(क्रमशः) ❑

सत्संग यही सिखाता है

– पूज्य बापूजी

लोग बोलते हैं कि 'इच्छा छूटती नहीं, इच्छा छोड़ना कठिन है' लेकिन संत बोलते हैं कि 'इच्छा पूरी करना असम्भव है।' इच्छा पूरी नहीं होती, इच्छा गहरी होती जाती है। जो कठिन काम है वह तो हो सकता है लेकिन जो काम असम्भव है वह नहीं हो सकता है। हमें इच्छाएँ खींचती हैं इसलिए हम सत् वस्तु (परमात्मा) से दूर हो जाते हैं। किस विषय की इच्छाएँ खींचती हैं ? या तो देखने की या तो सुनने की या सूँघने की या चखने की या स्पर्श करने की। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध - इन पाँच प्रकार के विषयों की इच्छाएँ हमें घसीटती हैं। अब आज हमारी जो स्थिति है, जो अवस्था है, इसके जवाबदार हम हैं। हमारी इच्छाएँ ही घूम-फिरकर देर-सवेर अवस्था का रूप धारण कर लेती हैं। इच्छाएँ आकर अवस्था दे जाती हैं, मिटती नहीं और दूसरी बन जाती हैं।

विषम इच्छाएँ होती हैं इसीलिए हम दुःखी होते हैं। सजातीय इच्छा हुई और वह पूरी हुई तो गहरी चली जायेगी। इच्छा थोड़ी देर के लिए पूरी हुई, थोड़ी देर का हर्ष हुआ परंतु जिस वस्तु से सुख मिला उस वस्तु ने हमारे अंदर राग की एक गहरी लकीर खींच दी और जिस वस्तु से दुःख मिला उस वस्तु ने हमारे अंदर भय की लकीर खींच दी। इच्छाएँ पूरी नहीं हुईं बल्कि उन्होंने हमारे चित्त को टुकड़े-टुकड़े कर

दिया । अब क्या करना चाहिए ?

एक तो होती है सत् वस्तु और दूसरी होती है असत् वस्तु । तो मन के फुरने, कल्पनाएँ जो हैं कि 'यह करूँ तो सुखी होऊँगा, वह करूँ तो सुखी होऊँगा...', इन कल्पनाओं के द्वारा असत् वस्तु को पाने की इच्छा हमारे जीवन को टुकड़े-टुकड़े कर देती है और सत्संग के द्वारा सत्त्वगुण बढ़ायें तो हम सत् वस्तु अपने सत्स्वरूप को पा लेते हैं ।

दो चीजें होती हैं । एक होती है - नित्य और दूसरी होती है - अनित्य । बुद्धिमान आदमी अपने लिए अनित्य वस्तु पसंद करने के बजाय नित्य वस्तु पसंद करेगा, असत् वस्तु पसंद करने के बजाय सत् वस्तु पसंद करेगा । जो नित्य है, आप उसको पसंद करना और जो अनित्य है, उसका उपयोग करना ।

देह अनित्य है - पहले नहीं थी, बाद में नहीं रहेगी और अब भी बदल रही है । जो वस्तु अभी मिली है, वह पहले हमारे पास नहीं थी और मिली है तो उसको छोड़ना पड़ेगा । ऐसी कोई वस्तु नहीं जो मिली हुई हो और आप सदा रख सकें । या तो मिली हुई वह वस्तु आपको छोड़नी पड़ेगी या वस्तु आपको छोड़कर चली जायेगी । फिर चाहे वह नौकरी हो, चाहे मकान हो, चाहे परिवार हो, चाहे पति हो, चाहे पत्नी हो, चाहे गाड़ी हो, चाहे देह हो । देह आपको मिली है तो उसे छोड़ना पड़ेगा । बचपन आपको मिला था तो छूट गया । जवानी मिली थी, छूट गयी । बुढ़ापा मिला है, छूट जायेगा । मौत मिलेगी, वह भी छूट जायेगी किंतु आप नहीं छूटोगे क्योंकि आप अछूट आत्मा हो, स्वतःसिद्ध हो, सच्चिदानंदघन हो । जो मिली हुई चीज है उसको आप रख नहीं सकते और अपने-आपको छोड़ नहीं सकते । कितना सरल सत्य है, कितना सनातन सत्य है, कितना स्वाभाविक है !

लोग बोलते हैं, संसार को छोड़ना कठिन है लेकिन संतों का यह अनुभव है, सत्संग से हमने यह जाना है कि संसार को छोड़ना कठिन नहीं, संसार को रखना असम्भव है । कठिन नहीं, असम्भव ! परमात्मा को छोड़ना असम्भव है । ईश्वर को आप छोड़ नहीं सकते और जगत को आप रख नहीं सकते । देखो, कितना सरल सौदा है !

बचपन छोड़ने की आपने मेहनत की क्या ? अपने-आप छूट गया । 'बचपन छोड़ूँ, बचपन छोड़ूँ...'- कोई रट लगायी थी ? 'जवानी छोड़ूँ, जवानी छोड़ूँ...'- कोई चिंता की थी ? छूट गयी । आप रखना चाहें तो भी छूट जायेगी । ऐसे ही 'अपमान छोड़ूँ, निंदा छोड़ूँ या स्तुति छोड़ूँ...' नहीं, ये अपने-आप छूटते जा रहे हैं । एक साल पहले जो आपकी निंदा या स्तुति का प्रसंग था, वह अभी पुराना हो गया, तुच्छ हो गया । जो निंदा हुई वह पहले दिन बड़ी भयानक लगी, जो स्तुति हुई वह पहले दिन बड़ी मीठी लगी लेकिन अब देखो, सब पुराना हो गया । संसार की ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है, कोई स्थिति नहीं है कि जिसको आप रख सकें । आपको छोड़ना नहीं पड़ता है महाराज ! छूटता चला जा रहा है ।

संसार को थामना असम्भव है और अपने को हटाना असम्भव है । जिसको आप हटा नहीं सकते वह है सत् वस्तु और जिसको आप रख नहीं सकते वह है असत् वस्तु । सत्संग सत् वस्तु का बोध कराने के लिए होता है और जब तक सत् वस्तु का बोध नहीं हुआ तब तक आदमी कहीं टिक नहीं सकता क्योंकि असत् शाश्वत नहीं है । तो असत् का उपयोग करो और सत् का साक्षात्कार करो । बस, सत्संग यही सिखाता है । ❑

यह संसार मुसाफिरखाना है । होटल या धर्मशाला में जाते हैं तो वहाँ की चीजों का उपयोग करते हैं, सिर पर उठाकर घर थोड़े ही ले आते हैं ! ऐसे ही यह शरीर भी एक साधन है बेटे ! इसका उपयोग कर लो ।

दिया। अब क्या करना चाहिए ?

एक तो होती है सत् वस्तु और दूसरी होती है असत् वस्तु। तो मन के फुरने, कल्पनाएँ जो हैं कि 'यह करूँ तो सुखी होऊँगा, वह करूँ तो सुखी होऊँगा...', इन कल्पनाओं के द्वारा असत् वस्तु को पाने की इच्छा हमारे जीवन को टुकड़े-टुकड़े कर देती है और सत्संग के द्वारा सत्त्वगुण बढ़ायें तो हम सत् वस्तु अपने सत्स्वरूप को पा लेते हैं।

दो चीजें होती हैं। एक होती है - नित्य और दूसरी होती है - अनित्य। बुद्धिमान आदमी अपने लिए अनित्य वस्तु पसंद करने के बजाय नित्य वस्तु पसंद करेगा, असत् वस्तु पसंद करने के बजाय सत् वस्तु पसंद करेगा। जो नित्य है, आप उसको पसंद करना और जो अनित्य है, उसका उपयोग करना।

देह अनित्य है - पहले नहीं थी, बाद में नहीं रहेगी और अब भी बदल रही है। जो वस्तु अभी मिली है, वह पहले हमारे पास नहीं थी और मिली है तो उसको छोड़ना पड़ेगा। ऐसी कोई वस्तु नहीं जो मिली हुई हो और आप सदा रख सकें। या तो मिली हुई वह वस्तु आपको छोड़नी पड़ेगी या वस्तु आपको छोड़कर चली जायेगी। फिर चाहे वह नौकरी हो, चाहे मकान हो, चाहे परिवार हो, चाहे पति हो, चाहे पत्नी हो, चाहे गाड़ी हो, चाहे देह हो। देह आपको मिली है तो उसे छोड़ना पड़ेगा। बचपन आपको मिला था तो छूट गया। जवानी मिली थी, छूट गयी। बुढ़ापा मिला है, छूट जायेगा। मौत मिलेगी, वह भी छूट जायेगी किंतु आप नहीं छूटोगे क्योंकि आप अछूट आत्मा हो, स्वतःसिद्ध हो, सच्चिदानंदघन हो। जो मिली हुई चीज है उसको आप रख नहीं सकते और अपने-आपको छोड़ नहीं सकते। कितना सरल सत्य है, कितना सनातन सत्य है, कितना स्वाभाविक है !

लोग बोलते हैं, संसार को छोड़ना कठिन है लेकिन संतों का यह अनुभव है, सत्संग से हमने यह जाना है कि संसार को छोड़ना कठिन नहीं, संसार को रखना असम्भव है। कठिन नहीं, असम्भव ! परमात्मा को छोड़ना असम्भव है। ईश्वर को आप छोड़ नहीं सकते और जगत को आप रख नहीं सकते। देखो, कितना सरल सौदा है !

बचपन छोड़ने की आपने मेहनत की क्या ? अपने-आप छूट गया। 'बचपन छोड़ूँ, बचपन छोड़ूँ...'- कोई रट लगायी थी ? 'जवानी छोड़ूँ, जवानी छोड़ूँ...'- कोई चिंता की थी ? छूट गयी। आप रखना चाहें तो भी छूट जायेगी। ऐसे ही 'अपमान छोड़ूँ, निंदा छोड़ूँ या स्तुति छोड़ूँ...' नहीं, ये अपने-आप छूटते जा रहे हैं। एक साल पहले जो आपकी निंदा या स्तुति का प्रसंग था, वह अभी पुराना हो गया, तुच्छ हो गया। जो निंदा हुई वह पहले दिन बड़ी भयानक लगी, जो स्तुति हुई वह पहले दिन बड़ी मीठी लगी लेकिन अब देखो, सब पुराना हो गया। संसार की ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है, कोई स्थिति नहीं है कि जिसको आप रख सकें। आपको छोड़ना नहीं पड़ता है महाराज ! छूटता चला जा रहा है।

संसार को थामना असम्भव है और अपने को हटाना असम्भव है। जिसको आप हटा नहीं सकते वह है सत् वस्तु और जिसको आप रख नहीं सकते वह है असत् वस्तु। सत्संग सत् वस्तु का बोध कराने के लिए होता है और जब तक सत् वस्तु का बोध नहीं हुआ तब तक आदमी कहीं टिक नहीं सकता क्योंकि असत् शाश्वत नहीं है। तो असत् का उपयोग करो और सत् का साक्षात्कार करो। बस, सत्संग यही सिखाता है। ❑

यह संसार मुसाफिरखाना है। होटल या धर्मशाला में जाते हैं तो वहाँ की चीजों का उपयोग करते हैं, सिर पर उठाकर घर थोड़े ही ले आते हैं ! ऐसे ही यह शरीर भी एक साधन है बेटे ! इसका उपयोग कर लो।

बेवकूफ से पाला पड़े तो क्या करें ?

बीरबल ग्यारह साल का था तब सारस्वत्य मंत्र जपता था। छोटी-सी उम्र में ही उस बालक ने सारस्वत्य मंत्र के जप से अपनी बुद्धि का इतना विकास कर लिया था कि अकबर ने उसे अपने मंत्री-पद पर नियुक्त कर दिया था। अकबर जब हिन्दुओं की, हिन्दू धर्म की धार्मिक मान्यताओं का मजाक उड़ाना चाहता तो बीरबल अपनी बुद्धिमत्ता से उसको ऐसा जवाब देता कि उसको मुँह की खानी पड़ती।

बीरबल तो सनातन धर्मावलम्बी था। वह संतों का, शास्त्रों का, माता-पिता का बहुत आदर करता था। एक बार अकबर दरबार में बैठा था। बीरबल का मजाक उड़ाने की दृष्टि से बोला : ''बीरबल ! जब तुम इतने होशियार हो तो तुम्हारे पिताजी कितने होशियार होंगे ! मैं तुम्हारे पिताजी से मिलना चाहता हूँ।'' बीरबल समझ गया कि जरूर कुछ गड़बड़ करेगा, लगता है ईर्ष्या करनेवालों का षड्‌यंत्र है। मेरे पिताजी का अपमान करना चाहता होगा।

बीरबल ने कहा : ''ठीक है हुजूर ! कल ले आऊँगा।''

घर जाकर बीरबल ने कहा : ''पिताजी ! बादशाह आपसे मिलना चाहते हैं। कल सुबह आप दरबार में चले जाइये पर आपसे कोई भी कुछ भी पूछे तो मौन रहना, बोलना ही नहीं।''

बीरबल के पिताजी सुबह दरबार में पहुँचे। अकबर ने उन्हें पहले कभी देखा ही नहीं था, पहली मुलाकात थी। बीरबल जानबूझकर साथ में नहीं आया था।

अकबर ने पूछा : ''आप कौन हैं श्रीमान ?''

वे चुप रहे।

''आप बीरबल के पिताजी हैं ?''

''अरे ! आप बहरे तो नहीं हैं ?''

''कुछ तो बोलो !''

''आपका नाम क्या है, कहाँ से आये हैं ?''

वे तो चुपचाप खड़े रहे।

अकबर : ''कैसे आदमी से पाला पड़ा ! सिपाही ! इसको बाहर ले जाओ।''

अगले दिन जब बीरबल दरबार में आया तो अकबर बोला : ''बीरबल ! किसी बेवकूफ से पाला पड़े तो क्या करना चाहिए ?''

''हुजूर ! चुप रहना चाहिए।''

अकबर अपने-आप बेवकूफ सिद्ध हो गया। सभी लोग हँस पड़े। अकबर और उसके चापलूसों का सिर शर्म से नीचा हो गया। ❑

(पृष्ठ ४ से 'एक भरोसा, एक आस, एक विश्वास' का शेष)

अखण्डानंदजी चल पड़े थे, उड़िया बाबा चल पड़े थे। जहाँ किसी व्यक्ति की सम्भावना नहीं, वहाँ भी कोई-न-कोई आकर दे जाता, खिला जाता है। मार्ग भूलते हैं तो कोई रास्ता दिखा जाता है। कोई डूबने लगता है और उसीकी आस, उसीका भरोसा रखकर पुकारता है तो उस जल में कौन-सी ऐसी सत्ता है जो हाथ पकड़कर किनारे कर देती है ?

कर्तुं शक्यं अकर्तुं शक्यं अन्यथा कर्तुं शक्यम्।

उस परमात्मा की आस, भरोसा और विश्वास परम हितकारी, परम मंगलमय है। इसका मतलब यह नहीं कि अपना पुरुषार्थ छोड़ दें, चलो बैठे रहें। नहीं, पुरुषार्थ करें किंतु अपने अहं पर भरोसा करके पुरुषार्थ न करें, शाश्वत आत्मा-परमात्मा का भरोसा... नश्वर का भरोसा, नश्वर की आस, नश्वर का विश्वास नाश की तरफ ले जाता है। शाश्वत आत्मा-परमात्मा का भरोसा, उसीको पाने की आस और उसी पर विश्वास उसीसे मिला देता है। ❑

हृदयकोष की रक्षा करो

- पूज्य बापूजी

काम, क्रोध, लोभ, मोह के जो आवेग आते हैं, उनसे बचने के लिए सोचो कि 'इन आवेगों के अनुसार कौन-सा काम करें, कौन-सा न करें ?' इसमें तुम्हारी पुण्याई चाहिए । पहले जानो । **जानाति, इच्छति, करोति ।** जानो, फिर शास्त्र-अनुरूप इच्छा करो, फिर कर्म करो । आप क्या करते हैं कि पहले कर्म करते हैं । इंद्रियाँ कर्म में लगती हैं, मन उनके पीछे लगता है और बुद्धि को घसीटके ले जाता है तो धीरे-धीरे बुद्धि राग-द्वेषमयी हो जाती है ।

इच्छा हुई तो सोचो कि 'इच्छा के अनुसार कर्म करें या बुद्धि से सोचके कर्म करें ?' इच्छा हुई, फिर मन ने उसको सहमति दी और इच्छा के अनुरूप मन करना चाहता है तो धीरे-धीरे बुद्धि दब जायेगी । बुद्धि का राग-द्वेष का भाग उभरता जायेगा, समता मिटती जायेगी । अगर शास्त्र, गुरु और धर्म का विचार करके बुद्धि को बलवान बनायेंगे और समता बढ़ानेवाला, मुक्तिदायी जो काम है वह करेंगे तो बुद्धि और समता बढ़ेगी लेकिन मन का चाहा हुआ काम करेंगे तो बुद्धि और समता का नाश होता जायेगा । कुत्ते, गधे, घोड़े, बिल्ले, पेट से रेंगनेवाले तुच्छ प्राणी और मनुष्य में क्या फर्क है ?

वसिष्ठजी कहते हैं : हे रामजी ! कभी ये मनुष्य थे लेकिन जैसी इच्छा हुई ऐसा मन को घसीटा और बुद्धि उसी तरफ चली गयी तो धीरे-धीरे दुर्बुद्धि होकर केंचुए, साँप और पेट से रेंगनेवाले प्राणियों की योनियों में पड़े हैं ।

जो बहुत द्वेषी होता है वह साँप की योनि में जाता है । इसी प्रकार की और भी कई योनियाँ हैं । यह चार दिन की जिंदगी है, अगर इसको सँभाला नहीं तो चौरासी लाख जन्मों की पीड़ाएँ सहनी पड़ती हैं ।

रक्षत रक्षत कोषानामपि कोषं हृदयम् ।
यस्मिन् सुरक्षिते सर्वं सुरक्षितं स्यात् ॥

'जिसके सुरक्षित होने से सब सुरक्षित हो जाता है, वह कोषों का कोष है हृदय । उसकी रक्षा करो, रक्षा करो ।'

खरीदारी करके कमीशन खाना, चोरी करना, बेईमानी करना... ले क्या जायेंगे, कहाँ ले जायेंगे ! प्रारब्ध में जो होगा वह नहीं माँगने पर भी मिलेगा और कितनी भी बेईमानी करो, देर-सवेर उसका फल बेईमान को दुःखद योनियों में ले जायेगा । यदि तुम दगाखोर और कपटी हुए तो उसका फल तुमको भी दुःखद योनियों में ले जायेगा । ऐसे कपटी, बगला भगत को फिर बगुले, बिलार वाली, कपट करके पेट भरनेवाली योनियों में जाना पड़ता है । तो बुद्धि में लोभ का आवेग आया, काम का आवेग आया, क्रोध का आवेग आया इंद्रियों में-शरीर में तो शास्त्र के अनुरूप परिणाम का ख्याल करके बुद्धि को बलवान बनायें और आवेग को सहन करें । लोभ के आवेग को सहन करें । सोचें, 'अनीति का धन क्या करना, अनीति का भोग क्या करना ?' पहले शास्त्र के ढंग से बुद्धि में औचित्य-अनौचित्य समझ लो । वासना कहती है यह कर्म करो, इच्छा बोलती है करो लेकिन बुद्धि बोलती है उचित तो नहीं है, तो धीरे-धीरे थोड़ा समय निकाल दो और मन को थोड़ा समझाओ अथवा दूसरे काम में लगाओ तो वासना और द्वेष की लहर शांत हो जायेगी । अगर करने का आवेग है, मन भी **(शेष पृष्ठ ११ पर)**

राक्षस भी जिसे पसंद नहीं करते

किसीके द्वारा की गयी भलाई या उपकार को न माननेवाला व्यक्ति कृतघ्न कहलाता है। 'महाभारत' में पितामह भीष्म धर्मराज से कहते हैं : ''कृतघ्न, मित्रद्रोही, स्त्रीहत्यारे और गुरुघाती इन चारों के पाप का प्रायश्चित हमारे सुनने में नहीं आया है।''

गौतम नाम का एक ब्राह्मण था। ब्राह्मण तो वह केवल जाति से था, वैसे एकदम निरक्षर और म्लेच्छप्राय था। पहले तो वह भिक्षा माँगता था किंतु भिक्षाटन करते हुए जब म्लेच्छों के नगर में पहुँचा तो वहीं एक विधवा स्त्री को पत्नी बनाकर बस गया। म्लेच्छों के संग से उसका स्वभाव भी उन्हींके समान हो गया। वन में पशु-पक्षियों का शिकार करना ही उसकी जीविका हो गयी।

एक दिन एक विद्वान ब्राह्मण जंगल से गुजरे। यज्ञोपवीतधारी गौतम को व्याध के समान पक्षियों को मारते देख उन्हें दया आ गयी। उन्होंने उसको समझाया कि यह पापकर्म छोड़ दे। गौतम के चित्त पर उनके उपदेश का प्रभाव पड़ा और वह धन कमाने का दूसरा साधन ढूँढ़ने निकल पड़ा। वह व्यापारियों के एक दल में शामिल हो गया किंतु वन में मतवाले हाथियों ने उस दल पर आक्रमण कर दिया, जिससे कुछ व्यापारी मारे गये। गौतम अपने प्राण बचाने के लिए भागा और रास्ता भटक गया। वह भटकते-भटकते दूसरे जंगल में जा पहुँचा, जिसमें पके हुए मधुर फलोंवाले वृक्ष थे। उस वन में महर्षि कश्यप का पुत्र राजधर्मा नामक बगुला रहता था। गौतम संयोगवश उसी वटवृक्ष के नीचे जा बैठा, जिस पर राजधर्मा का विश्राम-स्थान था।

संध्या के समय जब राजधर्मा ब्रह्मलोक से लौटे तो देखा कि उनके यहाँ एक अतिथि आया है। उन्होंने मनुष्य की भाषा में गौतम को प्रणाम किया और अपना परिचय दिया। गौतम को भोजन कराके कोमल पत्तों की शय्या बना दी। जब वह लेट गया तब राजधर्मा अपने पंखों से उसे हवा करने लगे।

परोपकारी राजधर्मा ने पूछा : ''ब्राह्मणदेव! आप कहाँ जा रहे हैं तथा किस प्रयोजन से यहाँ आना हुआ?''

गौतम : ''मैं बहुत गरीब हूँ और धन पाने के लिए यात्रा कर रहा था। मेरे कुछ साथियों को हाथियों ने मार डाला। मैं अपने प्राण बचाने के लिए इधर आ गया हूँ।''

राजधर्मा : ''आप मेरे मित्र राक्षसराज विरूपाक्ष के यहाँ चले जाइये, वे आपकी मदद करेंगे।''

प्रातःकाल ब्राह्मण वहाँ से चल पड़ा। जब विरूपाक्ष ने सुना कि उनके मित्र ने गौतम को भेजा है, तब उन्होंने उसका बड़ा सत्कार किया और उसे खूब धन देकर विदा किया।

गौतम जब लौटकर आया तो राजधर्मा ने फिर सत्कार किया। रात्रि में राजधर्मा भी भूमि पर ही सो गये। उन्होंने पास में अग्नि जला दी थी, जिससे वन्य पशु रात्रि में ब्राह्मण पर आक्रमण न करें। परंतु रात्रि में जब उस लालची, कृतघ्न गौतम की नींद खुली तो वह सोचने लगा, 'मेरा घर यहाँ से बहुत दूर है। मेरे पास धन तो पर्याप्त है पर मार्ग में भोजन के लिए कुछ नहीं है। क्यों न इस मोटे बगुले को मारकर साथ ले लूँ तो रास्ते का मेरा काम चल जायेगा।' ऐसा सोचकर उस क्रूर ने सोते हुए राजधर्मा को मार डाला। उनके पंख नोच दिये, अग्नि में उनका शरीर भून लिया और धन की गठरी लेकर वहाँ से चल पड़ा।

इधर विरूपाक्ष ने अपने पुत्र से कहा : ''बेटा ! मेरे मित्र राजधर्मा प्रतिदिन ब्रह्माजी को प्रणाम करने ब्रह्मलोक जाते हैं और लौटते समय मुझसे मिले बिना घर नहीं जाते । आज दो दिन बीत गये, वे मिलने नहीं आये । मुझे उस गौतम ब्राह्मण के लक्षण अच्छे नहीं लगते । मेरा चित्त व्याकुल हो रहा है । तुम जाओ, पता लगाओ कि मेरे मित्र किस अवस्था में हैं ।''

राक्षसकुमार दूसरे राक्षसों के साथ जब राजधर्मा के निवासस्थान पर पहुँचा तो देखा कि राजधर्मा के पंख खून से लथपथ बिखरे पड़े हैं । इससे उसे बड़ा दुःख हुआ । क्रोध के मारे उसने गौतम को ढूँढ़ना प्रारम्भ किया । थोड़ी ही देर में राक्षसों ने उसे पकड़ लिया और ले जाकर राक्षसराज को सौंप दिया ।

अपने मित्र का आग में झुलसा शरीर देखकर राक्षसराज शोक से मूर्च्छित हो गये । मूर्च्छा दूर होने पर उन्होंने कहा : ''राक्षसो ! इस दुष्ट के टुकड़े-टुकड़े कर दो और अपनी भूख मिटाओ ।''

राक्षसगण हाथ जोड़कर बोले : ''राजन् ! इस पापी को हम लोग नहीं खाना चाहते । आप इसे चाण्डालों को दे दें ।''

राक्षसराज ने गौतम के टुकड़े-टुकड़े कराके वह मांस चाण्डालों को देना चाहा तो वे भी उसे लेने को तैयार नहीं हुए । वे बोले : ''यह तो कृतघ्न का मांस है । इसे तो पशु, पक्षी और कीड़े तक नहीं खाना चाहेंगे तो हम इसे कैसे खा सकते हैं !'' फलतः वह मांस एक खाई में फेंक दिया गया ।

राक्षसराज ने सुगंधित चंदन की चिता बनवायी और उस पर बड़े सम्मान से अपने मित्र राजधर्मा का शरीर रखा । उसी समय देवराज इन्द्र के साथ कामधेनु उस परोपकारी महात्मा के दर्शन करने आकाशमार्ग से आयीं । कामधेनु के मुख से अमृतमय झाग राजधर्मा के मृत शरीर पर गिर गया और राजधर्मा जीवित हो गये ।

इस प्रकार परोपकारी, धर्मनिष्ठ राजधर्मा की तो जयजयकार हुई और कृतघ्न गौतम को प्राप्त हुई - मौत, अपकीर्ति और नरकों की यातनापूर्ण यात्रा !

ऐसे अनेक कृतघ्नों की दुर्दशा का वर्णन इतिहास में मिलता है । जैसे - महावीरजी से गोशालक ने तेजोलेश्या विद्या की शिक्षा ली और उस विद्या का प्रयोग उन्हींके ऊपर कर दिया तो महावीरजी का तो कुछ नहीं बिगड़ा, उलटा वह दुष्ट ही उस विद्या के तेज से झुलसकर मर गया ।

महापुरुष तो अपनी समता में रहते हैं, उनके मन में किसीके प्रति नफरत नहीं होती पर प्रकृति उन कृतघ्नों को धोबी के कपड़ों की तरह पीट-पीटकर मारती है । ❑

(पृष्ठ ९ से 'हृदयकोष की रक्षा करो' का शेष)

कहता है करो, बुद्धि भी कहती है करो और करने का औचित्य भी है तो उसे कर डालो ।

एक तरफ इच्छा खींचती है और दूसरी तरफ बुद्धि और शास्त्र सहमति नहीं देते हैं तो वह कर्म अधर्म है । ऐसी स्थिति में थोड़ा समय गुजरने दो । जैसे समुद्र की लहर आयी और आप बैठ गये, समय गया तो लहर उतर गयी । ऐसे ही ये आवेग हैं । आवेग के समय थोड़ा शांत हो जायें, थोड़ा धैर्य रखें तो आवेग उतर जाता है । नहीं तो आवेग-आवेग में आदमी अंधा हो जाता है । आवेग-आवेग में अपनी खुशामद करनेवाले चमचे अच्छे लगेंगे ।

तो राग-द्वेष से बचें । आवेगों से बचें और भगवान में श्रद्धा करें । भगवान में सर्वसमर्थता, अंतर्यामीपना आदि दिव्य गुण हैं । आर्त्तभाव से प्रार्थना करें कि 'प्रभु ! हमें अपने प्रसाद से पावन करो । हम तो आपके रस में नहीं आ रहे, आप ही हमें जबरदस्ती अपने रस में डुबा दो ।'

आप चाहे कैसे भी हो, आर्त्तभाव से भगवान को प्रार्थना करते हो तो भगवान तुरंत आपके दोषों को झाड़ देते हैं और भगवद्रस मिलता है । ❑

स्वार्थ त्यागें, महान बनें

- पूज्य बापूजी

मनुष्य को कभी भी स्वार्थ में आबद्ध नहीं होना चाहिए। व्यावहारिक वासनाओं को पोसने का स्वार्थ व्यक्ति की शक्तियों को कुंठित कर देता है। जो सुख का अभिलाषी है वह सच्ची सेवा नहीं कर सकता। जो संसारी वासनाओं का गुलाम है वह अपना ठीक से विकास नहीं कर सकता। जो अपने स्वार्थ का गुलाम है वह अपना कल्याण नहीं कर सकता। व्यक्तिगत स्वार्थ कुटुम्ब में कलह पैदा कर देगा, कुटुम्ब का स्वार्थ पड़ोस में कलह पैदा कर देगा, पड़ोस का स्वार्थ गाँव में कलह पैदा कर देगा, गाँव का स्वार्थ तहसील में कलह पैदा करेगा, तहसील का स्वार्थ जिले में कलह पैदा करेगा, जिले का स्वार्थ राज्य में कलह पैदा करेगा, राज्य-प्रांतीयता का स्वार्थ राष्ट्र में कलह करेगा, राष्ट्रीयता का स्वार्थ विश्व में कलह करेगा और वैश्विकता का स्वार्थ विश्वेश्वर से दूर पटक देगा। स्वार्थ में आकर मूर्खतावश जो कुप्रचार करते हैं, करवाते हैं मेरे दिल में उनके प्रति नफरत नहीं होती।

दूसरे लोग फोन-पर-फोन करते हैं कि 'बापूजी की सहनशक्ति कैसी है ! इतना कुप्रचार, इतना जुल्म-पर-जुल्म हो रहा है और बापूजी को देखो तो कोई दुःख नहीं ! जब देखो मुस्कराते रहते हैं। हमको तो बड़ा दुःख होता है।'

बेटा ! तुम जहाँ बैठकर देखते हो वहाँ तुम ठीक हो लेकिन वास्तविकता कुछ और है। जो अखण्ड भारत को तोड़ना चाहते हैं, उनकी मुरादें हैं कि हम आपस में लड़ें-भिड़ें, झगड़ें परंतु हमारा ज्ञान कहता है कि

जो हम आपस में न झगड़ते ।
बने हुए क्यों खेल बिगड़ते ॥

लोग यह मानते हैं कि संघर्ष के बिना विकास नहीं होता, संघर्ष के बिना अपनी चाही हुई चीज नहीं मिलती। भाईसाहब ! विदेशी लोग तो ऐसी बड़ी भारी गलती में पड़े हैं कि लड़ाओ और राज करो (divide and rule)। हिन्दू-हिन्दुओं को लड़ाओ, हिन्दूवादी सरकार को बदनाम करो, हिन्दू संस्थाओं को बदनाम करो। हिन्दुओं को आपस में लड़ाकर उन पर राज करने की मुरादवालों ने, धर्मांतरण करानेवालों ने हिन्दू साधुओं और पुलिस के बीच में, हिन्दू संस्थाओं और मीडिया के बीच में एक खाई खड़ी कर दी। ये लोग तभी सफल हो पाते हैं जब हम स्वार्थ के वशीभूत होकर आपस में लड़ने लग जाते हैं। हमें आपस में लड़ना नहीं चाहिए। लड़ाई-झगड़े से जो भी मिलेगा वह सुखद नहीं होगा और सात्त्विक ज्ञान, आत्मज्ञान, गीताज्ञान से जो मिलेगा वह कभी दुःखद नहीं होगा। संघर्ष से आपको कुछ मिल गया तो आप भोगी बन जाओगे, और अधिक संघर्ष करोगे, अपने से कमजोर लोगों का शोषण करने लग जाओगे।

संघर्ष से अपनी इच्छापूर्ति करो- यह स्वार्थियों की, संकीर्ण मानसिकतावालों की मान्यता बहुत छोटी जगह पर बैठकर होती है। वास्तव में संघर्ष करके अपनी इच्छापूर्ति करने के बाद भी दुःख नहीं मिटता, चिंता नहीं मिटती, विकार नहीं मिटते, अशांति नहीं मिटती। उस अशांति, विकार तथा बदले की भावना से मरने के बाद भी न जाने किस-किस रूप में एक-दूसरे से प्रतिशोध लेने के लिए न जाने किन-किन योनियों में भटकते हैं, मारकाट करते रहते हैं, तपते-तपाते रहते हैं कुत्तों की नाईं।

स्वार्थी, नासमझ आपस में कुत्तों की नाईं लड़ मरते हैं परंतु समझदार मनुष्य तो बहुत ऊँचे ज्ञान के धनी होते हैं, दूरदृष्टिवाले होते हैं। लोग कहते हैं : 'बापू के करोड़ों शिष्य हैं। बापूजी आज्ञा करें तो देश को हिला देंगे, यह कर देंगे-वह कर देंगे।' मैंने कहा : 'नहीं बाबा ! देश को हिलाओगे तो भी तो अपने को ही घाटा है।'

षड्यंत्रकारियों के बहकावे में आकर समझदारी की कमीवाले कुछ-की-कुछ साजिशें करते हैं। जो षड्यंत्र करके दूसरों का बुरा सोचता है, बुरा चाहता है, बुरा करता है उसका तो अपना ही बुरा हो जाता है। आप किसीका बुरा चाहेंगे तो पहले अपने दिल में बुराई लायेंगे, इससे कुछ-न-कुछ आपकी बुद्धि मारी जायेगी। बुद्धि मारी जाती है तब लाखों-करोड़ों की नजरों में आदरणीय व्यक्ति के लिए भी हलकी भाषा बोलते हैं। फिर उनको लोगों की बददुआएँ मिलती हैं। शास्त्र में आता है कि

अपूज्या यत्र पूज्यन्ते पूजनीयो न पूज्यते।
त्रीणि तत्र भविष्यन्ति दारिद्र्यं मरणं भयम् ॥

(शिव पुराण, रुद्र. सती. : ३५.९)

जहाँ पूजनीय माता-पिता, सद्गुरुओं का आदर नहीं होता और अपूजनीय लोगों का आदर-सत्कार होता है, वहाँ भय, दरिद्रता और मृत्यु का तांडव होने लगता है। गलत निर्णय होने लगते हैं। अशांति के कारण अकाल मृत्यु हो जाती है, हार्टअटैक आ जाता है, एक्सीडेंट होने लगते हैं। इसका प्रत्यक्ष दृष्टांत है - अफगानिस्तान में महात्मा बुद्ध की मूर्तियाँ तोड़ी गयीं, महापुरुषों के प्रति नफरत जगायी गयी तो वहाँ कितना-कितना कहर हो रहा है !

स्वार्थ आदमी को गुमराह कर देता है। वे लोग सचमुच मूर्ख हैं जो अपनी ही संस्कृति की जड़ों को काटने में लगे रहते हैं। वे फिर भटक जाते हैं, स्वार्थ में अंधे होकर किसी भी तरीके से पैसा इकट्ठा करने लग जाते हैं। ऐसे लोग मरने के बाद नीच योनियों में जाते हैं।

लोगों में सुख-शांति का प्रसाद बाँटनेवाले संतों-महापुरुषों के प्रति जिनको वैरभाव है, समझ लो उनकी तो तौबा है ! वे न जाने कुत्ता बनकर कितने जन्मों तक दुष्कर्मों का फल भोगेंगे, मेढक बनेंगे। रामायण में आता है :

हर गुर निंदक दादुर होई।
जन्म सहस्र पाव तन सोई ॥

एक बार नहीं, हजार जन्मों तक उनको मेढक बनना पड़ता है, फिर ऊँट बनते हैं, बैल बनते हैं। लोग बोलते हैं : 'इनको दंड मिलना चाहिए।' अरे ! आप-हम क्या दंड देंगे ! वे स्वयं दंड ले रहे हैं। अशांति का दंड ले रहे हैं, निंदा का दंड ले रहे हैं, लानत का दंड ले रहे हैं और कई जन्मों में दंड भोगनेवाला मन बना रहे हैं। अब उनको हम-आप क्या दंड देंगे !

बहुत गयी थोड़ी रही व्याकुल मन मत हो।
धीरज सबका मित्र है करी कमाई मत खो ॥

अगर कोई शुभकामना करनी है तो दो-दो माला भगवन्नाम का जप कर लो। स्वार्थ में अंधे बनकर आपस में लड़ाकर मारनेवाले इन षड्यंत्रकारियों से बचकर अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए, सीमा पर तैनात प्रहरी की तरह सदैव सावधान रहो। अपनी दृष्टि को व्यापक बनाने का अभ्यास करो। महापुरुषों का सत्संग सुनो।

भगवद्सुमिरन का, परिस्थितियों में सम रहने की सजगता का, परमात्म-विश्रांति का, आकाश में एकटक निहारने का, श्वासोच्छ्वास में सोऽहं जप द्वारा समाधि-सुख में जाने का आदरसहित अभ्यास करना। कभी-कभी एकांत में समय गुजारना, विचार करना कि इतना मिल गया आखिर क्या ? अपने को स्वार्थ से बचाना। स्वार्थरहित कार्य ईश्वर को कर्जदार बना देता है और स्वार्थसहित कार्य इन्सान को गद्दार बना देता है। निष्काम कर्म, संस्कृति की सेवा, भगवान का सुमिरन और एकांत में आत्मविचार करके आत्मा के आनंद में आनेवाला महान हो जाता है। ❑

आशाओं के दास नहीं आशाओं के राम बनो

- पूज्य बापूजी

औरंगजेब के मंत्रिमंडल में कई लोग थे। उनमें से एक था सिंधी मंत्री वलिराम, जो बहुत ही गजब का व्यक्ति था। वह वित्त-विभाग सँभालता था, आर्थिक व्यवस्था देखता था। वर्ष के आखिरी दिनों में उसे हिसाब-किताब पूरा करने के लिए जहाँपनाह के साथ गुफ्तगू करने हेतु आना होता था।

औरंगजेब का स्वभाव था कि कोई भी आये, वह पहले 'राजाधिराज, अन्नदाता... यह-वह...' कहके उसकी खुशामदखोरी करे, उसका अभिवादन करे और जब तक वह अभिवादन स्वीकारता नहीं या बैठने की आज्ञा नहीं देता तब तक वह चाहे मंत्री हो चाहे कोई भी हो, खड़ा रहे।

एक बार जब वलिराम औरंगजेब के पास हिसाब-किताब के बहीखाते लाया तो उसने अभिवादन किया, पर औरंगजेब कहीं दूसरी जगह ध्यान लगाये हुए था। उसने दूसरी बार अभिवादन किया फिर भी औरंगजेब का ध्यान नहीं गया। वलिराम का अंतरात्मा पुकार रहा था कि 'लोगों का शोषण करके अहंकार को पुष्ट करनेवाले इस पुतले का इतना अभिवादन करते हुए भी यह देखता नहीं। इससे अगर आधा भी भगवान की भक्ति करते, भगवद्‌चिंतन, भगवद्ज्ञान में लगते तो बेड़ा पार हो जाता।'

उसने धीरे-से वे बहीखाते रखे और दबे पाँव निकल गया तथा गाँव में जाकर ढिंढोरा पिटवा दिया कि जिसको जो वस्तु चाहिए, वह वलिराम के घर से ले जाय। **इकट्ठी करने में तो जीवन लग जाता है पर छोड़ने में मृत्यु का झटका ही काफी है।** ऐसे ही बाँटने और छोड़ने में तो देर नहीं लगती। एक दिन तो छोड़ना ही पड़ता है। वलिराम ने 'मरकर छोड़ने के बजाय जीते-जी उनकी ममता और आसक्ति छोड़ो' ऐसा विचारकर सर्वत्याग-यज्ञ की घोषणा कर दी। जिसको जो चाहिए था, वह उठाकर ले गया। वलिराम ने भी एक धोती उठायी। उसके दो टुकड़े किये। एक को नीचे बाँधा और एक को साधुओं की तरह कंधे पर रखकर चला गया यमुना के विशाल रेतीले क्षेत्र में।

जाकर पैर पसारके बैठा है। ईश्वर का चिंतन करते-करते उसके साथ मानसिक गुफ्तगू कर रहा है।

एक दिन औरंगजेब ने पूछा : ''कई दिनों से वलिराम नहीं आया, कहाँ गया ?''

लोगों ने बताया कि ''हुजूर ! वह आया था और उसने दो-दो बार अभिवादन किया पर आपने मुड़कर भी नहीं देखा, इसलिए वह रुष्ट होकर चला गया।''

बोले : ''जाओ ! शाही फरमान है, उनको आज्ञा करो कि जहाँपनाह बुलाते हैं।''

लोगों ने खबर दी कि जहाँपनाह फरमान भेजकर बुलवा सकें ऐसी जगह पर वे नहीं हैं; वे तो सर्वत्याग करके साधु बाबा हो गये, फक्कड़ हो गये।

औरंगजेब बोला : ''अब क्या करें ?''

''हुजूर ! अब तो क्या, उनको तो कुछ चाहिए नहीं, वे तो फकीर हो गये। अब तो हमको जाना चाहिए।''

''अच्छा, चलो।''

औरंगजेब यमुना के तट पर आया। वलिराम आकाश की ओर निगाह जमाये बैठे हैं। बस, उस अलख पुरुष के विचार में उनकी पलकें कम झपक

रही हैं । आँखों की पलकें कम हिलने से मन एकाग्र होता है ।

औरंगजेब खड़ा है । वह कहता है : 'वलिराम ! वलिराम !...' वलिराम मानो है ही नहीं, किसी दूसरी दुनिया में है । आखिर औरंगजेब झुँझलाता है : ''अरे वलिराम ! आखिर तुम मेरे नौकर हो, मेरे यहाँ तुमने गुलामी की है । जहाँपनाह खड़ा है और तुम बैठने तक को नहीं कह रहे हो ! क्या तुम्हारी इतनी जुर्रत !''

वलिराम ने कहा : ''बादशाह ! कौन किसका नौकर और कौन किसका मालिक ? मनुष्य अपनी बेवकूफी का नौकर है, अपनी वासना का नौकर है । इस चक्कर में मत पड़ना कि कोई तुम्हारा नौकर है । 'मुझे बढ़िया मकान मिले, बढ़िया रथ मिले, बहुत धन मिले...' - इस वासना के कारण मैं तुम्हारा नौकर था । मैं अपनी वासना का नौकर था कि 'यह भोगूँगा तो सुखी होऊँगा, यह पाऊँगा तो सुखी होऊँगा... ।' अब समझा कि सुख का दरिया तो मेरे दिल में लहरा रहा है । बेवकूफी चली गयी, वासना चली गयी । अब मैं तुम्हारा नौकर काहे का और तुम मेरे जहाँपनाह काहे के ! बेवकूफी मिट गयी तो कोई किसीका नौकर नहीं, सब शहंशाह का स्वरूप हैं, ईश्वर का आत्मा हैं ।''

वलिराम ने ऐसा सारगर्भित उपदेश औरंगजेब को सुना दिया । महाराज ! औरंगजेब देखता ही रह गया । बोला : ''आखिर यह करने से तुझे क्या फायदा हुआ ?''

वलिराम बोले : ''क्या फायदा हुआ वह तो आगे पता चलेगा । अभी तो इतना ही हुआ कि मैं अभिवादन कर रहा था और जहाँपनाह आँख उठाकर भी नहीं देख रहा था और जब इस जहाँपनाह की परवाह छोड़के उस परमेश्वर को अपना मानकर बैठा हूँ तो जहाँपनाह अपना तख्त छोड़कर नंगे पैर यहाँ हाजिर हो गया है और मुझे उनकी तरफ देखने की फुरसत नहीं मिल रही है तथा मैं डाँट रहा हूँ फिर भी जहाँपनाह सुन रहा है । यह अभी शुरुआत का चमत्कार है, आगे तो संत भी मेरी कथा करेंगे क्योंकि मैं उस परमेश्वर का हो रहा हूँ ।''

...और कर रहे हैं हम लोग कथा । वलिराम की बात सुन रहे हैं, सुना रहे हैं ।

यह सारा जगत आशा-तृष्णाओं से बँधा है । 'मैं कौन हूँ' यह जान लो तो आशाओं के राम बन जाओगे ।

इच्छाएँ होती कैसे हैं ? आँखें देखती हैं, कान सुनते हैं, नासिका सूँघती है, जीभ चखती है । बाहर की चीजों के आकर्षण से इन्द्रियों पर प्रभाव पड़ता है और मन उनके साथ सहमत होता है । बुद्धि में यदि ज्ञान-वैराग्य है तो इन्द्रियाँ विषयों की आशा करायेंगी किंतु बुद्धि विषय भोगने के परिणामों का ज्ञान देगी । जब परिणाम का ज्ञान होगा तो आशाएँ कम होती जायेंगी । जो आपके जीवन में अत्यंत जरूरी है वह करोगे तो आशाओं के दास नहीं, आशाओं के राम हो जाओगे । जैसी इच्छा हुई, आशा हुई वैसा करने लगोगे तो आशाओं के दास बन जाओगे । मन में कुछ आया और वह कर लिया तो इससे आदमी अपनी स्थिति से गिर जाता है, परंतु शास्त्रसम्मत रीति से, सादगी और संयम से आवश्यकताओं को पूरा करे, आशाओं को न बढ़ाये । आवश्यकताएँ सहज में पूरी होती हैं । मन के संकल्प-विकल्पों को दीर्घ ॐकार की ध्वनि से अलविदा करता रहे और निःसंकल्प नारायण में टिकने का समय बढ़ाता रहे । 'श्री योगवासिष्ठ' बार-बार पढ़े । कभी-कभी श्मशान जाके अपने मन को समझाये - 'शरीर यहाँ आकर जले उससे पहले अपने आत्मस्वभाव को जान ले, पा ले बच्चू ! ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर ले बच्चू !'

यदि इस प्रकार अभ्यास करके आत्मपद में स्थित हो जाय तो फिर उसके द्वारा संसारियों की भी मनोकामनाएँ पूरी होने लगती हैं । ☐

भगवान की विशेष कृपाएँ

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

ईश्वर की चार विशेष कृपाएँ हैं जिन्हें नास्तिक आदमी भी स्वीकार करेगा । ईश्वर की पहली कृपा है कि हमको मनुष्य-शरीर दिया । 'रामायण' में आता है :

बड़ें भाग मानुष तनु पावा ।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ॥

'बड़े भाग्य से यह मनुष्य-शरीर मिला है। सब ग्रंथों ने यही कहा है कि यह शरीर (भारत में जन्म) देवताओं को भी दुर्लभ है।' **(रामचरित. उ.कां. : ४२.४)**

हमारे जन्मते ही माँ के भोजन से हमारे लिए दूध बन गया। किसी वैज्ञानिक के बाप की ताकत नहीं कि रोटी-सब्जी से दूध बनाके दिखाये । यह ईश्वर की कृपा का प्रत्यक्ष दर्शन है । जब बच्चा खाने-पीने के लायक होता है तो दूध बंद हो जाता है और जब दूसरा बच्चा आता है तो फिर दूध चालू हो जाता है। यह जड़ का काम नहीं है, इसमें समझदारी, शक्ति चेतन परमात्मा की है।

ईश्वर की दूसरी कृपा है कि हमको बुद्धि दी, शास्त्र का ज्ञान, भगवान की उपासना की पद्धति और श्रद्धा दी ।

श्रद्धापूर्वाः सर्वधर्मा मनोरथफलप्रदाः ।
श्रद्धया साध्यते सर्वं श्रद्धया तुष्यते हरिः ॥

'श्रद्धापूर्वक आचरण में लाये हुए सब धर्म मनोवांछित फल देनेवाले होते हैं । श्रद्धा से सब कुछ सिद्ध होता है और श्रद्धा से ही भगवान श्रीहरि संतुष्ट होते हैं ।' **(नारद पुराण, पूर्व भाग : ४.१)**

श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति होती है । **श्रद्धावान् लभते ज्ञानम् ।** यदि मनुष्य को ईश्वर एवं ईश्वरप्राप्त महापुरुषों में दृढ़ श्रद्धा हो जाय तो फिर उसके लिए मुक्ति पाना सहज हो जाता है। श्रद्धा ही श्रेष्ठ धन है। श्रद्धा ऐसा अनुपम सद्गुण है कि जिसके हृदय में वह रहता है, उसका चित्त श्रद्धेय के सद्गुणों को पा लेता है । श्रद्धा में ऐसी शक्ति है कि वह दुःख में सुख बना देती है और सुख में सुखानंदस्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार करा देती है। जिसके जीवन में श्रद्धा नहीं है वह भले ही बड़े पद पर है लेकिन अशांति की आग उसके चित्त को और वैरवृत्ति की आग उसके कर्मों को धूमिल कर देगी ।

तीसरी कृपा है कि भगवान क्या हैं, हम क्या हैं और भगवान को कैसे प्राप्त करें, ऐसी जिज्ञासा दी । जिज्ञासा होने से मनुष्य संतों के द्वार तक पहुँच सकता है और संतों के सत्संग से परमात्म-ज्ञान प्राप्त करके मुक्त भी हो सकता है ।

सारी कृपाओं में आखिरी कृपा है कि उसने हमें किसी जाग्रत, हयात, आत्मारामी महापुरुष तक पहुँचाया। वे संसार के सर्वोत्तम केवट हैं। जो उनकी भवतरण-नौका में सवार हो जाते हैं, वे निश्चित ही समस्त दुःखों-आपदाओं से पार हो जाते हैं ।

तीरथ नहाये एक फल, संत मिले फल चार ।
सद्गुरु मिले अनंत फल, कहत कबीर विचार ॥

महापुरुषों का मिलना यह ईश्वर की कृपा का प्रत्यक्ष दर्शन है। अगर मुझे सद्गुरु लीलाशाहजी महाराज नहीं मिलते तो मैं दस जन्म तो क्या दस हजार जन्मों में भी इस ऊँचाई को नहीं छू सकता था, जो मुझे मेरे सद्गुरु के सान्निध्य और कृपा से मिली । ऐसे ही एक महापुरुष हो गये हैं, लोग उनको मोकलपुर के बाबा बोलते थे। वे बड़े उच्चकोटि के संत थे। गंगाजी ने उनको अपने मध्य में ही रहने को जगह दे दी थी। गंगाजी की दो धाराएँ बन गयीं और बीच के टापू पर मोकलपुर के बाबा का निवास, आश्रम बना। बाद में फिर धीरे-धीरे गाँव भी बस गया।

मोकलपुर के बाबा बड़े अच्छे, आत्मारामी

संत थे । उनके पास एक सज्जन आये और बोले : ''बाबा ! मुझे ईश्वर के दर्शन करा दीजिये । हमने आपके सत्संग में सुना है कि ईश्वर हमारे आत्मा हैं और ईश्वर के लिए सच्ची तड़प हो तो वे जरूर दर्शन देते हैं पर महापुरुषों की कृपा होनी चाहिए । मुझ पर कृपा करो बाबा ! मुझे दर्शन करा दो ।'' बाबा ने सुना-अनसुना कर दिया ।

''बाबा ! जब तक मुझे दर्शन नहीं होगा, मैं यहाँ से जाऊँगा नहीं; अन्न नहीं खाऊँगा, जल नहीं पीऊँगा, उपवास करूँगा ।'' बाबा ने फिर अनसुना कर दिया । १२ घंटे हो गये, २४ घंटे हो गये, ३६ घंटे बीते, ४८ घंटे पूरे हो गये ।

बड़े अलबेले होते हैं महापुरुष ! सुबह को बाबा डंडा लेकर सामने खड़े हो गये : ''क्यों रे ! ईश्वर का दर्शन चाहता है, कैसा बेवकूफ है ! यह जो दिख रहा है वह क्या है !

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः ।

मैं जल में रस हूँ, सूरज और चंदा में मैं ही प्रभा के रूप में हूँ। वृक्षों में पीपल मैं हूँ। जब सर्वत्र नहीं देख सकता तो ईश्वर विशेषरूप से जहाँ प्रकट हुआ है वहाँ तो देख ।

प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ।

'मैं सम्पूर्ण वेदों में ॐकार हूँ, आकाश में शब्द और पुरुषों में पुरुषत्व हूँ ।'

ईश्वर-ही-ईश्वर तो है, और नया कौन-सा ईश्वर बुलायेगा ! कैसा बेवकूफ है !'' बाबाजी ने मार दिया डंडा । डंडा तो बाहर से लगा पर अंदर से ईश्वर और उसके बीच की जो खाई थी वह भर गयी और वह आदमी समाधिस्थ हो गया ।

गुरु कुम्हार शिष्य कुंभ है, गढ़ि-गढ़ि काढ़ै खोट ।
अंतर हाथ सहार दे, बाहर मारे चोट ॥

गुरु शिष्य की कमी को निकालने के लिए बाहर से चोट करते दिखते हैं पर अंदर अपनी कृपा का सहारा देकर रखते हैं । डंडा मारते ही बाबा ने अपना संकल्प बरसाया और शिष्य को परमात्म-विश्रांति मिल गयी । आप लोग ऐसी इच्छा मत करना कि बापू भी कभी हमें डंडा मारें । यह मेरी प्रक्रिया नहीं है, मेरी प्रक्रिया दूसरी है ।

हमको हयात महापुरुष में दृढ़ श्रद्धा दे दी, यह ईश्वर की कृपा नहीं तो क्या है ! ऐसा सद्भाव दिया कि सद्गुरु ईश्वर का दर्शन करा सकते हैं । यह भाव आना ईश्वर की कृपा की पराकाष्ठा नहीं है तो क्या है ! अगर मुझमें मेरे गुरुदेव के प्रति दृढ़ श्रद्धा नहीं होती, गुरुजी मुझे ईश्वर से मिला देंगे ऐसा दृढ़ विश्वास नहीं होता तो जैसे दूसरे लोग भाग गये ५-२५ प्रतिशत फायदा लेकर, ऐसे ही मैं भी तो भाग जाता। मेरी भी कई कसौटियाँ हुईं पर मैं भागा नहीं ।

मैं जब मेरे गुरुदेव के श्रीचरणों में रहता था, तब एक दिन गुरुदेव ने एक सेवक को 'पंचदशी' ग्रंथ पढ़ने को दिया । वह उसके सातवें प्रकरण का पहला श्लोक पढ़ रहा था :

आत्मानं चेद्विजानीयादयमस्मीति पुरुषः ।
किमिच्छन् कस्य कामाय शरीरमनुसंज्वरेत् ॥

'यदि पुरुष यह आत्मा है, मैं हूँ - इस प्रकार आत्मा को जान ले तो किस विषय की इच्छा करता हुआ और किस विषय के लिए आत्मा को तपायमान करे अर्थात् आत्मज्ञान से ही सब कामनाएँ शांत हो जाती हैं ।'

शरीर छूट जानेवाला है और आत्मा अमर है, इसको जानने के बाद वह पुरुष शरीर की वाहवाही अथवा शरीर के भोग के लिए क्यों अपने को पचायेगा ! यह चल रहा था और गुरुजी ने जरा-सी कृपादृष्टि डाली और अपने घर में घर दिखला दिया । तरंग ने अपने को सागर जान लिया, घड़े के आकाश ने अपने को महाकाश के रूप में देख लिया । जीव की कल्पना हटी और ब्रह्म हो गया ।

ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर कार्य रहे ना शेष ।

धनभागी हैं वे, जो संत-दर्शन की महत्ता जानते हैं, उनके दर्शन-सत्संग का लाभ लेते हैं, उनके द्वार पर जा पाते हैं, उनकी सेवा कर पाते हैं और धन्य है यह भारतभूमि, जहाँ ऐसे आत्मारामी संत अवतरित होते रहते हैं । ❑

हर परिस्थिति का सदुपयोग

(पूज्य बापूजी की सर्वहितकारी अमृतवाणी)

आपके जीवन का मुख्य कार्य प्रभुप्राप्ति ही है। शरीर से संसार में रहो किंतु मन को हमेशा भगवान में लगाये रखो। समय बड़ा कीमती है, फालतू गप्पे मारने में अथवा व्यर्थ की चेष्टाओं में समय बर्बाद न करके उसका सदुपयोग करना चाहिए। भगवद्स्मरण, भगवद्गुणगान और भगवद्चिंतन में समय व्यतीत करना ही समय का सदुपयोग है। आपका हर कार्य भगवद्भाव से युक्त हो, भगवान की प्रसन्नता के लिए हो इसका ध्यान रखें।

आपके पास क्या है, क्या नहीं है इसका महत्त्व नहीं है; जो है, जितना है उसका उपयोग किसलिए कर रहे हो इसका महत्त्व है। धन है, मान है और धन की हेकड़ी दिखा रहे हो : 'मैं बड़ा हूँ अथवा मेरे कुटुम्बी ऐसे हैं, वैसे हैं...।' धन का दिखावा करके दूसरों को प्रभावित करते हो और ईश्वर को भूलते हो तो धन का यह दुरुपयोग आपको दुःख में गिरा देगा। धन है, भगवान के रास्ते जाने में उसका सदुपयोग करते हो, जरूरतमंदों की नम्रता से सेवा करते हो, जिसका है उसीकी प्रीति के लिए लगाते हो तो धन आपका कल्याण कर देगा।

गरीब हो, मजदूरी करते हो, कमियाँ हैं इसकी परवाह न करो। इनका सदुपयोग करने से आपका मंगल हो जायेगा। आपके पास कैसी भी परिस्थिति आये - बीमारी की हो या तंदुरुस्ती की, निंदा की हो या वाहवाही की, सबका सदुपयोग करो। आपके पास क्या है इसका मूल्य नहीं है, आप उसका उपयोग सत् के लिए, प्रभु को पाने के लिए करो तो आपका कल्याण हो जायेगा। शबरी भीलन अनपढ़ थी, नासमझ थी लेकिन 'मैं भगवान की हूँ, गुरु की हूँ...' ऐसा सोचकर गुरुआज्ञा में चली तो महान हो गयी। राजा जनक विद्वान थे, धनवान थे; धन को, विद्या को समाज के हित में लगा दिया तो महान हो गये।

बीमारी आयी। किस कारण आयी यह समझकर सावधान हो गये कि दुबारा वह गलती नहीं करेंगे। 'बीमारी आयी तो तपस्या हो गयी, वाह प्रभु!' ऐसे प्रसन्न हुए तो यह बीमारी का सदुपयोग हुआ। जरा-सी बीमारी आयी और परेशान हो गये... तुरंत इंजेक्शन ले लिया, बिना विचार किये ऑपरेशन करा लिया और असमय बूढ़े हो गये। पैसे भी लुटवाये और शरीर भी खराब करा लिया तो यह बीमारी का दुरुपयोग हुआ।

लोग आपका मजाक उड़ाते हैं तो सावधान हो जाओ कि 'मरनेवाले शरीर का मजाक उड़ा रहे हैं, मसखरी कर रहे हैं। मैं इसको जाननेवाला हूँ। ॐ आनंद...' तो यह उस परिस्थिति का सदुपयोग हो गया।

कैसी भी परिस्थिति आये, उसका सदुपयोग करके अपने-आपको जानने की, भगवान को पाने की कला सीख लो।

बोले : 'महाराज! हमको भगवान पाने की इच्छा तो है लेकिन हमारे पतिदेव मर गये न, उनकी याद आ रही है। पति में बड़ा मोह था हमारा।'

कोई बात नहीं, मोह को रहने दो, मोह को तोड़ो मत। पतिदेव चले गये तो चले गये, भगवान की तरफ गये। मेरे पति को भगवान ने अपने-

आपमें समा लिया। अब पति की आकृति, ममता और विकार सब चला गया, भगवान रह गये। हम उस भगवान के लिए रो रहे हैं : 'हे प्रभु ! कब मिलोगे...' यह ममता का, रुदन का सदुपयोग हो गया।

'बाबा ! झूठ बोलने की आदत है। क्या करें ?'

ठीक है, खूब झूठ बोलो किंतु उसका सदुपयोग करो, भगवान खुश हो जायेंगे। आप मन-ही-मन ठाकुरजी के लिए सिंहासन सजाओ और भगवान से झूठ बोलो कि 'प्रभु ! आओ, आपके लिए सोने का सिंहासन बनाया है, बहुत नौकर-चाकर लगा रखे हैं, मक्खन-मिश्री रखी है...' इस प्रकार मन में जो भी भाव आये ठाकुरजी को प्रसन्न करने के लिए बंडल-पर-बंडल मारते जाओ। झूठ बोलने की आदत है, कोई बात नहीं, उसको दबाओ मत और कर्मों में फँसानेवाला झूठ कभी बोलो मत। ठाकुरजी को रिझानेवाला झूठ रोज बोलो, धीरे-धीरे झूठ चला जायेगा। ठाकुरजी की प्रीति, ठाकुरजी की निगाहें और ठाकुरजी का माधुर्य आपके हृदय में रति, प्रीति और तृप्ति के रूप में प्रगट होगा। कैसी है सनातन धर्म की व्यवस्था !

मिले हुए का आदर, जाने हुए में दृढ़ता और प्रभु में विकल्परहित विश्वास से आपका कर्मयोग हो जायेगा, भक्तियोग हो जायेगा, ज्ञानयोग हो जायेगा।

गरीबी से भी निर्दुःखता नहीं आती, अमीरी से भी निर्दुःखता नहीं आती बल्कि गरीबी व अमीरी का सदुपयोग करने से निर्दुःखता आती है और हृदय में परमात्मा का प्रागट्य हो जाता है। आपके पास गरीबी है तो डरो मत, उसका सदुपयोग करो; इससे आपके पास वह प्रगट होगा जिसके लिए दुनिया तरसती है। आप पठित हो या अनपढ़ हो, विद्वान हो या मूर्ख हो, बीमार हो या स्वस्थ हो, जैसे भी हो उसका सदुपयोग करो। माई है तो अपने माईपने का सदुपयोग करे, भाई है तो भाईपने का सदुपयोग करे। मुख्य सम्पादक है तो सम्पादकपने का सदुपयोग करे। पत्रकार है तो पत्रकारिता का सदुपयोग करे। सदुपयोग में इतनी शक्ति है कि उसके सहारे भगवान मिल जाते हैं।

'बाबा ! दुर्घटना हो जाय, दुःख आये उसका सदुपयोग करें तो क्या भगवान मिल जायेंगे ?' हाँ ! 'मूर्खता का, विद्वत्ता का, धन-धान्य का सदुपयोग करें तो क्या भगवान मिल जायेंगे ?' हाँ, बिल्कुल मिल जायेंगे। 'कुछ भी नहीं है, निपट-निराले एकदम कंगाल हैं, इस परिस्थिति का भी सदुपयोग करें तो क्या भगवान मिल जायेंगे ?' बोले : हाँ !

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः॥

'हे अर्जुन ! जो योगी अपनी भाँति सम्पूर्ण भूतों में सम देखता है और सुख या दुःख को भी सबमें सम देखता है, वह योगी परम श्रेष्ठ माना गया है।'

(भगवद्गीता : ६.३२)

परिस्थितियाँ कैसी भी आयें, उनमें डूबो मत उनका उपयोग करो। समझदार लोग संतों से, सत्संग से सीख लेते हैं और सुख-दुःख का सदुपयोग करके बहुतों के लिए सुख, ज्ञान व प्रकाश फैलाने में भागीदार होते हैं और मूर्ख लोग सुख आता है तो अहंकार में तथा दुःख आता है तो विषाद में डूबके स्वयं का तो सुख, ज्ञान और शांति नष्ट कर लेते हैं, औरों को भी परेशान करके संसार से हारकर चले जाते हैं।

संसार से जाना तो सभीको है, हमको भी जाना है, आपको भी जाना है; यहाँ सब जानेवाले

ही आते हैं । भगवान राम, भगवान श्रीकृष्ण, बुद्ध-महावीर सब आये और चले गये, हमारे दादे-परदादे सब चले गये तो हम कब तक ? यह शरीर तो जानेवाला है । जो जानेवाला है उसके जाने का सदुपयोग करो और जो रहनेवाला है उसको सत्संग के द्वारा पहचानकर अभी आप निहाल हो जाओ, खुशहाल हो जाओ, पूर्ण हो जाओ ।

पूर्ण गुरु किरपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान ।...

तो अब करना क्या है ? गरीब होना है ? अमीर होना है ? यहाँ रहना है ? परदेश जाना है ? क्या करना है ?

कुछ करना नहीं है, कोई परिवर्तन की इच्छा नहीं करनी है, जो कुछ हो रहा है उसका सदुपयोग करना है । 'ऐसा हो जाय, वैसा हो जाय, ऐसा बन जाऊँ...' इस चक्कर में मत पड़ो ।

प्रारब्ध पहले रच्यो, पीछे भयो शरीर ।
तुलसी चिंता क्या करे, भज ले श्री रघुवीर ॥

पुरुषार्थ अपनी जगह पर है, प्रारब्ध अपनी जगह पर है, दोनों का सदुपयोग करनेवाला धन्य हो जाता है ।

परिस्थिति कैसी भी आये, अपने चित्त में दुःखाकार या सुखाकार वृत्ति पैदा होगी लेकिन उस वृत्ति को बदलकर भगवदाकार करना, यह है परिस्थिति का सदुपयोग । धन आया, सत्ता आयी, योग्यता आयी और अहंकार बढ़ाया तो आपने इनका दुरुपयोग किया । यदि धन से **'बहुजनहिताय-बहुजनसुखाय'** का नजरिया बना और मिली हुई योग्यता का सत्यस्वरूप ईश्वर के ज्ञान में, शांति में, ईश्वरप्रसादजा बुद्धि बनाने में सदुपयोग किया तो आप और ऊपर उठते जायेंगे, अनासक्त भाव से और ऊँचाइयों को छूते जायेंगे । बाहर की ऊँचाई दिखे चाहे न दिखे लेकिन अंतरात्मा की संतुष्टि, प्रीति और तृप्ति आपके हृदय में आयेगी । ❑

सबसे बड़ा सहयोगी

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

जैसे जुआरी होना है तो दूसरा जुआरी आपको सहयोग करेगा, भँगेड़ी होना है तो दूसरा भँगेड़ी आपको सहयोग करेगा, ऐसे ही मुक्तात्मा बनना है तो भगवान ही आपका साथ देते हैं । कितना बड़ा सहयोग है भगवान का ! भगवान मुक्तात्मा हैं, आपका मुक्तात्मा बनने का इरादा हो गया तो वे खुश हो जाते हैं कि हमारी जमात में आ रहा है । जैसे कोई अच्छा आदमी किसी पार्टी में आता है तो पार्टीवाले खुश होते हैं । पार्टीवाले तो चमचे को अच्छा बोलेंगे और सच बोलनेवाले को बुरा बोलेंगे परंतु भगवान की नजर में कोई बुरा नहीं है । भगवान तो सच बोलनेवाले को ही अच्छा मानते हैं, चमचागिरी से भगवान राजी नहीं होते हैं ।

मूर्ख लोग बोलते हैं : 'अरे भाई ! प्रशंसा से, फूल चढ़ाने से, भोग लगाने से तो भगवान भी राजी हो जाते हैं और हमको दुःखों से बचाते हैं ।'

अरे मूर्ख ! भगवान की प्रशंसा से भगवान राजी हो जाते हैं - यह तू कहाँ से सुनकर आया, कहाँ से देखकर आया ? यह वहम घुस गया है । तुम भगवान के कितने गुण गाओगे ? अरब-खरबपति को बोलो कि 'सेठजी ! आप तो हजारपति हो, आप तो लखपति हो... आपके पास तो बहुत पैसा है, १२, १५-१५ लाख हैं... ।'

खरबपति को बोलो कि आपके पास १५ लाख हैं तो उसको तो गाली दी तुमने ! ऐसे ही अनंत-अनंत ब्रह्माण्ड जिसके एक-एक रोम में

हैं, ऐसे भगवान की व्याख्या हम क्या करेंगे और उनकी प्रशंसा क्या करेंगे ! हम भगवान की प्रशंसा करके उनका अपमान ही तो कर रहे हैं ! फिर भी भगवान समझते हैं कि 'बच्चे हैं, इस बहाने बेचारे अपनी वाणी पवित्र कर रहे हैं ।'

भगवान प्रशंसा से प्रसन्न होते हैं - यह वहम निकाल देना चाहिए । भगवान की प्रशंसा नहीं, भगवान का गुणगान करने से हमारी दोषमयी मति थोड़ी निर्दोष हो जाती है । बाकी तो भगवान का कुछ भी गुणगान करोगे तो एक प्रकार का बचकानापन ही है क्योंकि भगवान असीम हैं । आपकी बुद्धि सीमित है और आपकी कल्पना भी सीमित है तो आप भगवान की क्या महिमा गाओगे ! फिर भी भगवान कहते हैं : 'मेरे में चित्तवाला होकर तू मेरी कृपा से सम्पूर्ण विघ्नों से तर जायेगा । यदि तू अहंकार के कारण मेरी बात नहीं मानेगा तो तेरा पतन हो जायेगा ।'

फिर न जाने कीट, पतंग आदि किन-किन योनियों में भटकना पड़ेगा ।

जैसे किसी मनुष्य को मस्का मारकर उससे काम लिया जाता है, ऐसे ही भगवान को मस्का मारकर आप अपना कुछ भला नहीं कर सकते । भगवान को प्रीतिपूर्वक भजते हैं, कुछ देते हैं तो उन चीजों की आसक्ति छूटती है और भगवान के लिए आदर होने से आपका हृदय पवित्र होता है । बाकी भगवान खुशामद से राजी हो जायें, ऐसे वे भोले नहीं हैं । जैसे किसी नेता को, किसी और व्यक्ति को कोई चीज देकर, खुशामद करके आप राजी पा लेते हैं, वैसे भगवान खुशामद से राजी नहीं होते हैं । **भजतां प्रीतिपूर्वकम्...** भगवान प्रेम से राजी होते हैं । भगवान को स्नेह करो । कुछ भी न करो, एक नये पैसे की चीज भगवान को अर्पण नहीं करो तो भी चल जायेगा लेकिन प्रीतिपूर्वक भगवान को अपना मानो और अपने को भगवान का मानो ।

भगवान ऐसा सहयोग करते हैं, ऐसी मदद करते हैं जिसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते हैं । हम दस हजार जन्म लेकर भी यहाँ तक नहीं पहुँच सकते थे जहाँ गुरु, भगवान ने पहुँचा दिया । अपनी तपस्या से, अपने बल से हम नहीं पहुँच सकते थे । भगवान में प्रीति थी तो गुरु में प्रीति हो गयी । गुरु भगवत्स्वरूप हैं । संत कबीरजी ने कहा है : 'भगवान निराकार हैं । अगर साकार रूप में चाहते हो तो साधु प्रत्यक्ष देव ।' गुरु को भगवत्स्वरूप मानने से गुरु के हृदय से वही परब्रह्म परमात्मा छलके ।

ब्राह्मी स्थिति प्राप्त कर, कार्य रहे ना शेष ।
मोह कभी ना ठग सके, इच्छा नहीं लवलेश ॥
पूर्ण गुरु किरपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान ।... ❒

गुरु ही एक सहारा

नश्वर से शाश्वत का मारग, गुरुवर हमें सुझाते हैं ।
विवेकशील साधक जो होते, उस पथ चलते जाते हैं ॥
संसार बहुत आकर्षण देता, सुख का साधन लगता है ।
सुख के साधन में फँसकर, जीव भँवर में फँसता है ॥
गुरु कसौटी पर कसकर, गढ़-गढ़ खोट हटाते हैं ।
प्रेम रंग वर्षा कर देते, ज्ञान-भक्ति बढ़ाते हैं ॥
गुरु बिना उद्धार न होना, साधन में रत मत घबराना ।
गुरु कुम्हार हैं शिष्य कुम्भ है,
उनका कार्य है खोट हटाना ॥

पहले दुःख पाता है साधक, कदम कदम पर परीक्षा ।
गुरु आज्ञापालन दृढ़ता से, शेष रहे न कोई इच्छा ॥
कर विश्वास न पथ से हटता, मंजिल वो ही पाता है ।
आत्मबोध उसको हो जाता, ब्रह्मनिष्ठ हो जाता है ॥
जप तप सत्संग भजन साधना, चिंतन मनन कराते हैं ।
सीढ़ी से सीढ़ी पर चढ़ना, गुरुवर हमें सिखाते हैं ॥
नश्वर है यह जगत पसारा, तन माटी का एक खिलौना ।
क्षणभंगुर है जीवन सारा, पता नहीं कब क्या है होना ॥
गुरु ही एक सहारा 'घायल', भव से पार कराते हैं ।
समय नहीं है अब खोने का, प्रभुजी याद दिलाते हैं ॥

- प्रेमशंकर, दमोह (म.प्र.) । ❒

जवानी खो गयी

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

विदेशी चैनलों तथा पाश्चात्य संस्कृति द्वारा फैल रहे सांस्कृतिक प्रदूषण के कारण भारत के बच्चे एवं युवा अपनी संस्कृति से कटते जा रहे हैं। वे अपनी मर्यादा को लाँघकर अपने जीवन को कुसंस्कारों के अंधे कुएँ में धकेल रहे हैं।

एक बूढ़ी बाई कमर झुकाकर जा रही थी। उसको देखके छोरियों को मसखरी सूझी।

उन्होंने पूछा : ''बूढ़ी बाई ! क्या खो गया ? कमर झुकाकर क्या ढूँढ़ रही हो ?''

बूढ़ी बाई समझ गयी कि छोरियाँ मेरी मसखरी कर रही हैं। वह बोली : ''बेटी ! मेरा सब कुछ खो गया इसी रास्ते पर।''

''क्या खो गया ?''

बूढ़ी बाई बोली : ''इसी रास्ते से रोज आते-जाते मेरी जवानी खो गयी। तुम्हारी भी इसी रास्ते से आते-जाते जिंदगी खो जायेगी।''

पीपल पान खरंत है, हँसत कुंपलिया।
अम बीती तम बीतसे, धीरो बापड़िया॥

पीपल के पुराने पत्तों को गिरते देखकर नयी-नयी कोंपलें हँस पड़ीं। उनके हँसने का कारण समझकर पुराना पत्ता बोला : ''जो हम पर बीती है वही तुम पर भी बीतेगी। धीरज रखो बहन ! अगले पतझड़ के मौसम में तुम्हारा भी यही हाल होगा।''

बूढ़ी बाई बोली : ''छोरियो ! मेरी काहे को मसखरी करती हो, मेरी तो जवानी खोयी पर तुम्हारी भी न रहेगी।''

तो इस तरह करके बुजुर्गों के अभिशाप क्यों लेना !

विद्यार्थियों एवं युवाओं को तो चाहिए कि वे अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए कमर कसें। भ्रष्ट खानपान एवं आचार-विचार से सर्वथा दूर ही रहें। बड़े-बुजुर्गों का, माता-पिता का सम्मान करके, उनका मार्गदर्शन लेकर अपना जीवन उन्नत करना सीखें। भगवान रामजी अपने माता-पिता का सम्मान करते थे। रोज सुबह उठकर अपने गुरुदेव को तथा माता-पिता को प्रणाम करते थे, उनका आशीर्वाद लेते थे तो कितने महान हो गये !

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा॥

(श्री रामचरित. बा.कां. : २०४.४)

बच्चे-बच्चियों को व्यवहार में सावधान रहना चाहिए। अपने घर में अथवा पड़ोस में यदि कोई वृद्ध हो, बीमार हो, विकलांग हो अथवा तो किसी भी प्रकार की शारीरिक्-मानसिक अस्वस्थतावाला हो तो उसको देखकर खिल्ली नहीं उड़ानी चाहिए, उसकी मदद करनी चाहिए। उसका मजाक उड़ाकर पाप नहीं करना चाहिए बल्कि उसकी सेवा करके पुण्य का भागीदार बनना चाहिए।

बड़ों का सम्मान, उनकी सेवा करनेवाले की आयु, विद्या, यश तथा बल में वृद्धि होती है। यह शिक्षा है भारतीय संस्कृति की और पाश्चात्य संस्कृति है घर के बुजुर्गों को वृद्धाश्रम में डालने की, जिससे हमको सर्वथा दूर रहना चाहिए। जवानी खो जाय उसके पहले, जीवन खो जाय उसके पहले बड़े-बुजुर्गों की, माता-पिता की, जरूरतमंदों की सेवा करके उनका आशीर्वाद लेकर तथा संतों का संग करके कभी न खोनेवाले प्रभु का ज्ञान पा लेना चाहिए। ❐

उन्नति का सुयोग यौवन का सदुपयोग

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

आत्मनिष्ठ महापुरुष बड़े विलक्षण होते हैं। उनको कोई बात जँच जाती है तो स्वाभाविक ही उनसे उस बात की पुनरावृत्ति होती रहती है। जैसे नारायण बापू जब मौज आती तो कह उठते : 'हे प्रभु ! दया कर।' भगवत्पाद स्वामी श्री श्री लीलाशाहजी बापू कहते : 'हे भगवान ! सबको सद्बुद्धि दो... शक्ति दो... आरोग्यता दो... हम अपने-अपने कर्तव्य का पालन करें और सुखी रहें।' एक महात्मा बात-बात में कह उठते : 'सब रघुनाथजी की लीला है। वे बड़े लीलामय हैं।' दूसरे महात्मा बोला करते थे : 'अच्छा हुआ, भला हुआ।' एक अन्य महात्मा बात-बात में कहा करते थे : 'यार की मौज !'

ऐसे ही एक फक्कड़ महात्मा किसी गाँव के बाहर वृक्ष के नीचे बैठे थे। दिखने में हट्टे-कट्टे थे। महात्मा बोले जा रहे थे : 'वाह, क्या बात है ! अगली भी कुछ नहीं, पिछली भी कुछ नहीं, कुर्बान जावाँ बिचली पे।' उसी समय वहाँ से तीन युवतियाँ जा रही थीं। बीचवाली युवती ने सोचा, 'ये महात्मा क्या बोलते हैं !' महात्मा अपनी ही मस्ती में मस्त होकर वही वाक्य दोहराये जा रहे थे। उस बिचली नवविवाहिता सुंदरी ने जाकर अपने पति को बोला कि 'साधु ऐसा-ऐसा बोल रहे थे।' अगली युवती ने भी पुष्टि कर दी, पीछेवाली ने भी पुष्टि कर दी। गाँव के लोग आये, बोले : "अरे बाबा, क्या बोलते हो !"

बाबाजी बोले : "अरे, क्या बोल रहा हूँ ! अगली भी कुछ नहीं यार, पिछली भी कुछ नहीं, बलिहारी बिचली की !"

उनमें जो बिचली का पति था वह बोला : "बिचली तो मेरी पत्नी थी।"

"अरे चल ! बिचली तो सबकी है।"

"ऐ बाबा ! क्या बोलते हो ?"

एक बुजुर्ग ने कहा : "बाबा की बात को समझना पड़ेगा। बाबा ! बिचली माने क्या ?"

"अरे ! बिचली सबकी है, किसीने सँभाली तो सँभाली, नहीं तो गयी हाथ से।"

"बाबा ! कौन-सी बिचली ? बिचली तो इसकी औरत थी।"

"इसकी औरत ! कौन-सी बिचली ? वह तो सभीकी है।"

"बाबा ! ऐसा मत बोलो।"

"अरे, चोरी का माल है क्या ! बिचली तो सबकी होती है।"

"बाबा ! हम लोग कुछ समझे नहीं।"

बाबा बोले : "अगली कुछ नहीं अर्थात् बचपन की जिंदगी बेवकूफी में गुजर जाती है। पिछली भी कुछ नहीं अर्थात् बुढ़ापे में शरीर साथ नहीं देता, न योग करने का सामर्थ्य, न ध्यान-भजन होता है। बिचली है जवानी ! उसीमें निष्काम कर्म करो, जप करो, ध्यान करो, अपने को खोजो, अपने आत्मा को पाओ, अपने 'मैं' को खोजो। इसीलिए बोलता हूँ बिचली तो बिचली है !"

ज्यों केले के पात में, पात पात में पात।
त्यों संतन की बात में, बात बात में बात॥ □
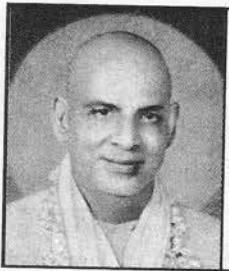
गुरुभक्ति-योग

- *ब्रह्मलीन स्वामी श्री शिवानंदजी*

गुरुभक्तियोग के सिद्धांत

* नम्रतापूर्वक पूज्य श्री सद्गुरु के पादारविंद के पास जाओ । सद्गुरु के जीवनदायी चरणों में साष्टांग प्रणाम करो । सद्गुरु के चरणकमल की शरण में जाओ । सद्गुरु के पावन चरणों की पूजा करो, ध्यान करो । सद्गुरु के पावन चरणों में मूल्यवान अर्घ्य अर्पण करो । सद्गुरु के यशःकारी चरणों की सेवा में जीवन अर्पण करो । सद्गुरु के दैवी चरणों की धूलि बन जाओ । ऐसा गुरुभक्त हठयोगी, लययोगी और राजयोगियों से ज्यादा सरलतापूर्वक एवं सलामत रीति से सत्यस्वरूप का साक्षात्कार करके धन्य हो जाता है ।

* सद्गुरु के दैवी पावन चरणों में आत्मसमर्पण करनेवाले को निश्चिंतता, निर्भयता और आनंद सहजता से प्राप्त होते हैं । वह लाभान्वित हो जाता है ।

* आपको गुरुभक्तियोग के मार्ग द्वारा सच्चे हृदय से, तत्परतापूर्वक प्रयास करना चाहिए ।

* गुरु के प्रति भक्ति इस योग का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है ।

* पवित्र शास्त्रों के विशेषज्ञ ब्रह्मनिष्ठ गुरु के विचार, वाणी और कार्यों में सम्पूर्ण श्रद्धा गुरुभक्तियोग का सार है ।

गुरुभक्तियोग : एक विज्ञान के रूप में

* इस युग में आचरण किया जा सके ऐसा सबसे ऊँचा व सबसे सरल योग गुरुभक्तियोग है ।

* गुरुभक्तियोग की फिलॉसफी में सबसे बड़ी बात गुरु को परमेश्वर के साथ एकरूप मानना है ।

* गुरुभक्तियोग की फिलॉसफी का व्यावहारिक स्वरूप यह है कि गुरु को अपने इष्टदेवता से अभिन्न मानें ।

* गुरुभक्तियोग ऐसी फिलॉसफी नहीं है जो पत्र-व्यवहार या व्याख्यानों के द्वारा सिखायी जा सके । इसमें तो शिष्य को कई वर्षों तक गुरु के पास रहकर अनुशासन एवं संयमपूर्ण पवित्र जीवन बिताना चाहिए, ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए एवं गहरा ध्यान करना चाहिए ।

* गुरुभक्तियोग सर्वोत्तम विज्ञान है ।

गुरुभक्तियोग का फल

* गुरुभक्तियोग अमरत्व, परम सुख, मुक्ति, सम्पूर्णता, शाश्वत आनंद और चिरंतन शांति प्रदान करता है ।

* गुरुभक्तियोग का अभ्यास सांसारिक पदार्थों के प्रति निःस्पृहता व वैराग्य उत्पन्न करता है तथा विवेक जगाता है, नश्वर के पीछे नाश होने से बचाता है व शाश्वत को पाने में मदद करता है ।

* गुरुभक्तियोग का अभ्यास भावनाओं एवं तृष्णाओं पर विजय पाने में शिष्य को सहायरूप बनता है, प्रलोभनों के साथ टक्कर लेने में तथा मन को क्षुब्ध करनेवाले तत्त्वों का नाश करने में सहाय करता है । अंधकार को पार करके प्रकाश की ओर ले जानेवाली गुरुकृपा प्राप्त करने के लिए शिष्य को योग्य बनाता है ।

* गुरुभक्तियोग का अभ्यास आपको भय, अज्ञान, निराशा, संशय, रोग, चिंता आदि से मुक्त होने के लिए शक्तिमान बनाता है और मोक्ष, परम शांति तथा शाश्वत आनंद प्रदान करता है ।

गुरुभक्तियोग की साधना

* गुरुभक्तियोग का अर्थ है व्यक्तिगत भावनाओं, इच्छाओं, समझ-बुद्धि एवं निश्चयात्मक बुद्धि के परिवर्तन द्वारा अहोभाव को अनंत चेतना-स्वरूप में परिणत करना ।

* गुरुभक्तियोग गुरुकृपा के द्वारा प्राप्त सचोट, सुंदर अनुशासन का मार्ग है ।

ज्ञान का अंजन मिला तो आँख खुल गयी

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

(संत कबीरजी जयंती : २६ जून)

कबीरदासजी के पुत्र का नाम कमाल और पुत्री का नाम कमाली था। कमाली जब सोलह-सत्रह वर्ष की थी तब की एक घटना है। कमाली सदैव प्रसन्न रहती थी। उसका स्वभाव मधुर और हिलचाल इतनी पवित्र थी कि कोई ब्राह्मण सोच भी नहीं सकता था कि यह बुनकर है। उसकी निगाहें नासाग्र रहतीं, वह इधर-उधर नहीं देखती थी। युवती तो थी, उम्रलायक थी लेकिन कबीरजी की मधुर छत्रछाया में रहने से उसका जीवन बड़ा आभा-सम्पन्न, प्रभाव-सम्पन्न था।

एक बार कमाली पनघट पर पानी भरने गयी। कुएँ से गागर भरकर ज्यों ही बाहर निकाली, इतने में एक ब्राह्मण आया और बोला : ''मैं बहुत प्यासा हूँ।'' कमाली ने गागर दे दी। वह ब्राह्मण गागर का काफी पानी पी गया और लम्बी साँस ली। कमाली ने पूछा : ''भाई ! इतना सारा पानी पी गये, क्या बात है ?''

ब्राह्मण ने कहा : ''मैं कश्मीर गया था पढ़ने के लिए। अब पढ़ाई पूरी हो गयी तो अपने घर जा रहा था। रास्ते में कहीं पानी मिला नहीं, सुबह का प्यासा था। पानी नहीं मानो यह तो अमृत था, बहुत देर के बाद मिला है तो इसकी कद्र हो रही है। अच्छा तुम कौन-सी जाति की हो ?''

कमाली बोली : ''कमाल है ! पानी पीने के बाद जाति पूछते हो ? ब्राह्मण ! पहले जाति पूछते।''

ब्राह्मण : ''मैं तो समझा तुम ब्राह्मण की कन्या होगी और फिर जल्दबाजी में मैंने पूछा नहीं, प्यास बहुत जोरों की लगी थी। बताओ, जाति की कौन हो तुम ?''

कमाली : ''हमारे पिता संत कबीरजी ताना-बुनी करते हैं। हम जाति के बुनकर हैं।''

उस विद्वान का नाम था हरदेव पंडित। 'बुनकर' सुनते ही वह आगबबूला हो गया, बोला : ''कबीर तो ब्राह्मणों को धर्मभ्रष्ट करते हैं और तुम भी उसमें सहयोगी हो ! मुझे तो तू ब्राह्मण-कन्या लगती थी। तूने मुझे पानी देने के पहले क्यों नहीं बताया कि हम बुनकर हैं ?''

कमाली : ''ब्राह्मण ! तुमने पूछा ही नहीं और मैंने धर्मभ्रष्ट करने के लिए तुमको पानी नहीं पिलाया है। मैंने तो देखा कोई प्यासा पथिक जा रहा है और पानी माँगता है इसलिए पानी पिलाया है। तुमने पानी जैसी चीज माँगी तो मैं ना कैसे करती ? क्यों तुम्हें जाति-पाँति के चक्कर में डालूँ ? मैंने तो देखा, पथिक प्यासा है, वैसे तो करोड़ों-करोड़ों लोग प्यासे ही हैं, उनकी प्यास तो मेरे पिताजी ही बुझा सकते हैं लेकिन तुम्हारे जैसे पथिक, जिसकी प्यास पानी से बुझती है उसकी प्यास तो मैं भी बुझा सकती हूँ। जिसकी प्यास आत्मा-परमात्मानुसंधान से बुझती है उसकी प्यास तो मेरे पिताजी बुझा सकते हैं।''

हरदेव पंडित : ''वाह ! जैसा तेरा बाप चतुर है बात करने में वैसी तू भी चतुर है। अपनी जाति नहीं बतायी और लगी है बड़ी ज्ञान छाँटने।''

कमाली : ''पंडितजी ! ज्ञान के बिना तो

जीवन खोखला है । ज्ञान तो पानी भरते समय भी चाहिए, रोटी बनाते समय और चलते समय भी चाहिए । कश्मीर के विद्वानों के पास उचित विद्या है, यह ज्ञान था तभी तो तुम पढ़ने गये । पढ़ाई पूरी हुई, यह ज्ञान हुआ तभी अपने वतन में आये हो । प्यास का ज्ञान हुआ तभी तुमने पानी माँगा । ज्ञान तो सतत चाहिए लेकिन वह ज्ञान अज्ञानसंयुक्त शरीर को पोसने में लगता है इसलिए दुःखकारी हो जाता है । यदि वह ज्ञानस्वरूप आत्मा के अनुसंधान में आकर फिर संसार का व्यवहार करता है तो पूजनीय हो जाता है, वंदनीय हो जाता है ।''

हरदेव पंडित ने सोचा कि मैं कश्मीर से पढ़कर आया और यह जुलाहे की लड़की मुझे ज्ञान दे रही है । वह बोला : ''चुप रह, ब्राह्मणों को ज्ञान छाँटती है !''

कमाली : ''पंडितजी ! ब्राह्मण कौन और बुनकर कौन ?''

हरदेव : ''जो जुलाहे लोग हैं वे बुनकर होते हैं और जो ब्राह्मण के कुल में जन्म लेते हैं वे ब्राह्मण होते हैं ।''

कमाली : ''नहीं पंडितजी ! जो ब्रह्म को जानता है वह ब्राह्मण होता है और जो राग-द्वेष में झूलता रहता है वह जुलाहा होता है ।''

हरदेव : ''तुम्हारे पिता भी ब्राह्मणों के विरुद्ध बोलते हैं, **पंडित बाद बदे सो झूठा** और तुमने हमारे साथ ऐसा किया ! लेकिन लड़कियों से मुँह लगना ठीक नहीं । चलो तुम्हारे पिता के पास, वहीं खुलासा होगा।''

कमाली : ''हाँ, चलिये पिताजी के पास ।''

कबीरजी तो अपने सततस्वरूप में रमण करनेवाले थे। उन्होंने देखा कि कमाली के साथ कोई पंडित चेहरे पर रोष लिये आ रहा है। कबीरजी ने अपने स्वरूप आत्मदेव में गोता मारा और पूरी बात जान ली ।

पंडित बोला : ''तुम्हारी लड़की ने मेरा ब्राह्मणत्व नाश कर दिया । मुझे अशुद्ध पानी पिलाकर अशुद्ध कर दिया ।''

जिनको अपने सततस्वरूप का स्मरण होता है, वे छोटी-मोटी बातों में उलझते नहीं । भले बाहर से कभी आँख दिखाके भी बात करें लेकिन भीतर से उलझते नहीं । वे समझते हैं कि संसार एक नाटक है।

कबीरजी हँसने लगे, बोले : ''पंडित ! पानी इसके घड़े में आने से अशुद्ध हो गया ! लेकिन कुएँ के अंदर क्या-क्या होता है ? उसमें जो मछलियाँ रहती हैं उनका मल-मूत्र आदि सब उसीमें होता है । कछुए आदि और भी जीव-जंतु रहते हैं, उनका पसीना, लार, थूक, मैला, उनके जन्म और मृत्यु के वक्त की सारी क्रियाएँ सब पानी में ही होती हैं । घड़ा जिस मिट्टी से बना है उसमें भी कई मुर्दों की मिट्टी मिली होती है, कई जीव-जंतु मरते हैं तो उसी मिट्टी में मिल जाते हैं । उसी मिट्टी से घड़े बनते हैं, फिर चाहे वह घड़ा ब्राह्मण के घर पहुँच जाय, चाहे बुनकर के घर । पृथ्वी पर अनंत बार जीव आये और मरे । ऐसी कौन-सी मिट्टी होगी, ऐसा कौन-सा एक कण होगा जिसमें मुर्दे का अंश न हो । पंडित ! कुआँ तो गाँव का है, उसमें से तो सभी लोग पानी भरते हैं, कई बुनकरों के घड़े, मटके, सुराहियाँ उसमें पड़ती होंगी । बुनकर के हाथ की रस्सियाँ भी पड़ती होंगी, उसी कुएँ से गाँव के सभी ब्राह्मण पानी भरते हैं और तुम पवित्रता-अपवित्रता का विचार करते हो, तो अपवित्र विचार यही है कि यह बुनकर है । शूद्र वह है जो हाड़-मांस की देह को 'मैं' मानता है और ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म को जानता है अथवा जानने के रास्ते चलता है ।''

कबीरजी की युक्तियुक्त बात से पंडित बड़ा प्रभावित हुआ । कबीरजी के दिल में सततस्वरूप का अनुसंधान था । वे घृणा, अहंकार से नहीं, नीचा दिखाने के लिए नहीं बल्कि उसका अज्ञान, अशांति मिटाकर उसको शांति का दान देने के लिए बोल रहे थे । पंडित का गुस्सा शांत हुआ । कमाली को पंडित ने साधुवाद दिया और कहा : ''हे देवी ! मैं कृतार्थ हो गया । आज मेरी विद्या सफल हुई कि मैं ऐसे ब्रह्मवेत्ता के चरणों में पहुँचा । तुम्हारे पवित्र हाथों से पानी पीकर मेरा अहंकार भी शांत हो गया, मेरी बेवकूफी भी दूर हो गयी । अब मैं भी आप लोगों के रास्ते चलूँगा ।''

जो देह को मैं मानते हैं वे भगवान के मंदिर में रहते हुए भी भगवान से दूर हैं और जो भगवान के स्वरूप का चिंतन करते हैं वे बाजार में रहते हुए भी मंदिर में हैं । इसलिए सतत चिंतन किया जाय कि जहाँ से मन फुरता है, बुद्धि को सत्ता मिलती है, चित्त को चेतना मिलती है, जहाँ से मन भूख-प्यास का पता लगाता है और मन को पता लगाने का जहाँ से सामर्थ्य मिलता है, उस चैतन्य आत्मा की स्मृति ही परमात्मा की सतत स्मृति है। उस चैतन्य को 'मैं' मानना समझो सारे दुःख, क्लेश, पाप से परे हो जाना है और उस चैतन्य की विस्मृति करके देह को 'मैं' मानना मानो सारे दुःख, क्लेश और पापों को आमंत्रित करना है । ❑

दिव्य प्रेरणा-प्रकाश ज्ञान प्रतियोगिता-२०१०

परम पूज्य बापूजी की पावन प्रेरणा एवं आशीर्वाद और साधकों के दैवी पुरुषार्थ से गत वर्ष १२,११५ विद्यालयों के १३,०७,६४९ विद्यार्थियों ने इस प्रतियोगिता का लाभ लिया । इस वर्ष भी प्रतियोगिता का दिव्य आयोजन किया जा रहा है ।

प्रतियोगिता का स्वरूप

१. क्षेत्रीय स्तर : विभिन्न वर्गों हेतु प्रतियोगिता निम्नलिखित पाठ्यक्रम पर आधारित रहेगी :

● कक्षा ५ से ७वीं : 'बाल संस्कार' पुस्तक । ● कक्षा ८ से १२वीं : दिव्य प्रेरणा-प्रकाश (७० अंक) एवं श्रीमद् भगवद्गीता, रामायण, महाभारत से सरल सामान्य ज्ञान पर (प्रति ग्रंथ १० अंक) । ● स्नातक वर्ग : दिव्य प्रेरणा-प्रकाश (५० अंक) तथा श्रीमद् भगवद्गीता, रामायण व महाभारत से (५० अंक)

पुरस्कार : ✲ तीनों वर्गों के ५-५ विजेताओं को पुरस्कार, सभी प्रतियोगियों को प्रमाणपत्र, विद्यालयों-कॉलेजों हेतु भी प्रमाणपत्र व स्मृतिचिह्न । ✲ १०००, ५०००, २१००० से अधिक विद्यार्थियों का पंजीकरण करवानेवाली समितियों को नकद राशि व पुरस्कार ।

२. राष्ट्रीय स्तर : क्षेत्रीय स्तर पर ६०% से अधिक अंक प्राप्त करनेवाले कक्षा ८ से १२वीं एवं स्नातक वर्ग के विद्यार्थियों हेतु उपरोक्त पाठ्यक्रम पर ही परीक्षा होगी ।

पुरस्कार : ✲ प्रथम १३ विजेताओं को पूज्य बापूजी के करकमलों से स्वर्णपदक, रजतपदक आदि विशेष पुरस्कार । ✲ अगले ४१० विद्यार्थियों को विशेष पुरस्कार । ✲ सर्वाधिक विद्यार्थियों का पंजीकरण करवानेवाली तीन समितियों एवं एक मैट्रो समिति को भी पूज्य बापूजी के करकमलों से पुरस्कार ।

प्रतियोगिता की समयावधि : आरम्भ १५ जून से, क्षेत्रीय स्तर की परीक्षा का आयोजन १ अगस्त से ३१ अक्टूबर तक, पुरस्कार-वितरण नवम्बर माह में और राष्ट्रीय प्रतियोगिता दिसम्बर माह की शीतकालीन छुट्टियों में होगी ।

बाल संस्कार केन्द्रों में भी प्रतियोगिता का अलग से आयोजन व पुरस्कार-वितरण :

अपने-अपने क्षेत्रों में समितियाँ, आश्रम एवं साधक इस प्रतियोगिता का आयोजन कर विद्यार्थियों को शीघ्र उन्नत बनाने के इस दिव्य सेवाकार्य में सहभागी बनें ।

सम्पर्क : बाल संस्कार मुख्यालय, अहमदाबाद । फोन : ०७९-३९८७७७४९, २७५०५०१०-११. विस्तृत जानकारी www.ashram.org से प्राप्त करें ।

सफलता का रहस्य

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)
(गतांक से आगे)

हमारा ही उदाहरण देख लो । हम दो भाई थे । हम भाई से अपना हिस्सा लेकर 'फिक्स्ड डिपोजिट' में रखकर फिर भजन करते, एकांत में कमरा लेकर साधना करते तो अभी तक वहीं माला घुमाते रहते । सब आश्रय छोड़कर ईश्वर की शरण गये तो हमारे लिए ईश्वर ने क्या नहीं किया ! किस बात की कमी रखी है उस प्यारे परमात्मा ने ! हम लोगों के समर्पण की कमी है जो परमात्मा की गरिमा का, महिमा का पता नहीं लगा सकते, इस दिव्य व्यवस्था का लाभ नहीं उठा सकते, परमात्मा अपनी ओर से कोई कमी नहीं रखते ।

हम तो घरवालों को सूचना देते हैं कि 'ऐसे रहना, वैसे रहना, करकसर से जीना । हम भजन को जाते हैं ।' पीछे की रस्सियाँ दिमाग में लेकर भजन करने जाते हैं तो फिर आत्मनिष्ठा भी ऐसी ही कंगली बनेगी । मार दो छलाँग ईश्वर के लिए... । 'अनंत जन्मों से बच्चे, परिवार होते आये हैं । उनका प्रारब्ध वे जानें । मेरा तो केवल परमात्मा ही है और परमात्मा का मैं हूँ ।' - ऐसा विचार करके जो ध्यान-भजन में लग पड़ते हैं, उनका कल्याण हो जाता है ।

एक माई घर से जा रही थी । जाते वक्त पड़ोसिन को कहने लगी : ''अमथी दादी ! मैं सती होने को जा रही हूँ । मेरे रसोईघर का दरवाजा खुला रह गया है, वह बंद कर देना । मेरे बच्चों को नहलाकर स्कूल भेजना ।''

अमथी दादी हँसने लगी ।

''क्यों हँसती हो ?'' माई ने पूछा ।

''तू क्या होगी सती !''

''हाँ-हाँ, मैं जा रही हूँ सती होने के लिए ।''

''चल-चल, बड़ी आयी सती होनेवाली ।''

माई श्मशान की ओर तो चली लेकिन सोचने लगी कि 'जानेवाला तो गया, अब अपने लिए तो नहीं किंतु छोटे-छोटे बच्चों के लिए तो जीना चाहिए ।' वह घर वापस चली आयी ।

लोग ईश्वर-भजन के लिए घरबार तो छोड़ते हैं परंतु किसी सेठ के यहाँ रुपये जमा कर जाते हैं । वह सेठ हर माह ब्याज की रकम भेजता रहता है । ऐसे भजन में बरकत नहीं आयेगी । अनन्य का सहारा छोड़ दिया और एक व्यक्ति में सहारा ढूँढ़ा ! अखण्ड के सहारे को भूलकर खण्ड के सहारे जिये !

एक वे साधु हैं जो रुपये-पैसे सँभालते हुए नर्मदा की परिक्रमा करते हैं । उनके रुपये-पैसे भील लोग छीन लेते हैं, किंतु जो साधु सबका सहारा छोड़कर ईश्वर के सहारे चल पड़ता है उसको सब वस्तुएँ आ मिलती हैं । जहाँ कोई व्यक्ति देनेवाला नहीं होता, वहाँ नर्मदाजी किसी ग्वालिन कन्या, बालिका या वृद्धा का रूप लेकर आ जाती हैं । चीज-वस्तु देकर देखते-ही-देखते अदृश्य हो जाती हैं । कइयों के जीवन में ऐसी घटनाएँ सुनी गयी हैं ।

उपनिषद् का ज्ञान आदमी का सब दुःख, पाप, थकान, अज्ञान, बेवकूफी हँसते-हँसते दूर कर देता है । जो परमात्मा को, ब्रह्म को सबमें प्रकट देखता है, ऋद्धि-सिद्धि, देवी-देवता सब उसके वश में हो जाते हैं । मात्र इतने-से ज्ञान में डट जाओ तो बाकी का सब आपकी सेवा में सार्थक होने लगेगा । सम्राट के साथ एकता कर

लो तो सेना-सेनापति, दास-दासियाँ, सूबेदार, अमलदार सब आपके अनुकूल हो जाते हैं । ऐसे ही विश्व के सम्राट ब्रह्म-परमात्मा का पूरा वफादार भक्त हो जा, फिर विश्व का पूरा माल-खजाना तेरा ही है । कितना अच्छा सौदा है यह ! अन्यथा तो एक-एक चपरासी, अमलदार को जीवन भर रिझाते-रिझाते मर जाना है ।

जो एक ईश्वर की ओर ठीक प्रकार से ईमानदारीपूर्वक चलता है, वह ब्रह्म में प्रतिष्ठित हो जाता है । जो परमात्मा से आकर्षित हो जाता है, उसकी तरफ सब भूत, पदार्थ, वस्तुएँ आकर्षित हो जाती हैं । देवता उस पर बलिहार जाते हैं । जैसे दो किलो के लौहचुम्बक से आधे किलो की लोहे की प्लेट जुड़ गयी और उस प्लेट से लोहे के छोटे-छोटे कण जुड़ गये । क्यों ? क्योंकि प्लेट का चुम्बक से तादात्म्य हो गया । इसीसे लोहे के कण उससे प्रभावित हो गये । वे तब तक ही प्रभावित रहेंगे जब तक कि लोहे की प्लेट चुम्बक से जुड़ी है । चुम्बक को छोड़ते ही लोहे के कण प्लेट को छोड़ देंगे ।

ऐसे ही चुम्बकों के चुम्बक परमात्मा से आपकी बुद्धि जुड़ी है तो लोग आपसे जुड़ जायेंगे । आप जब परमात्मा से विमुख होंगे तब लोग भी आपसे विमुख हो जायेंगे । परमात्मा से विमुख होने का कारण है 'मैं' पना, अहंता और वस्तुओं में ममता । अहंता और ममता से आदमी परमात्मा से विमुख होता है । इनका त्याग करने से परमात्मा के सम्मुख हो जाता है ।

महान होने की महिमा भी बतायी जा रही है, इलाज भी बताया जा रहा है, जो महान हुए हैं उनके नाम भी बताये जा रहे हैं : स्वामी रामतीर्थ, गुरु नानकजी, संत कबीरजी, संत तुकारामजी, संत एकनाथजी, संत ज्ञानेश्वरजी, मीराबाई, रामकृष्ण परमहंस, रमण महर्षि, संत श्री लीलाशाहजी बापू, सहजोबाई, मदालसा, गार्गी, मलूकदासजी, रामानुजाचार्यजी, शंकराचार्यजी आदि-आदि । अहंता-ममता छोड़कर वे संत अपने सोऽहं स्वरूप, परमात्मस्वरूप को पाने में लगे । कुछ भी नहीं था उनके पास, फिर भी सब कुछ उनका हो गया । जिन्होंने अपना राजपाट, धन-वैभव, सत्ता-सम्पत्ति आदि सब सँभाला, उनका आखिर में कुछ अपना रहा नहीं । जिन्होंने अहंता-ममता छोड़ी उन संतों-महापुरुषों को, श्रीकृष्ण को, रामजी को, जनक को, जड़भरतजी को लोग अभी तक याद कर रहे हैं, पूज रहे हैं । अगर निवृत्ति-प्रधान प्रारब्ध है तो उनके पास वस्तुएँ नहीं होंगी और प्रवृत्ति-प्रधान प्रारब्ध है तो वस्तुएँ होंगी । वस्तुओं का होना-न होना इससे बड़प्पन-छोटापन नहीं होता है; आप ईश्वर से मिलते हो तो बड़प्पन है, वस्तुओं की गुलामी करते हो तो छोटापन है - एकदम सरल-सीधी बात है । वेद भगवान और उपनिषद् हमसे कुछ छुपाते नहीं ।

'यह जो कुछ दिखता है वह सब वास्तव में ईश्वर है, आत्मा है, ब्रह्म है ।' - ऐसा जो देखते हैं वे वास्तव में देखते हैं । वे सब वस्तुओं को, सब सुखों को पा लेते हैं । मुक्ति तो उनके हाथ की बात है, अपनी निजी पूँजी है ।

कोई सोचे कि 'सब ब्रह्म है तो मजे से खायें-पियें, मौज उड़ायें, नींद करें ।' हाँ... खाओ-पियो लेकिन इससे रजो-तमोगुण आयेगा तो निष्ठा दब जायेगी । रजो-तमोगुण आत्मनिष्ठा को दबा देता है । रजो-तमोगुण उभर आयेगा तो 'सब ईश्वर है' इस ज्ञान को दबा देगा क्योंकि अभी नये हैं न ! सर्वब्रह्म का अनुभव अभी नूतन अनुभव है ।

जब सर्वात्मदृष्टि हुई तब रोग, शोक, मोह पास नहीं फटक सकते । वेद ने कोई संदिग्ध दृष्टि से यह नहीं कहा, बिल्कुल यथार्थ कहा है । सर्वात्मदृष्टि करो तो रोग, शोक, चिंता, भय सब भाग जायेंगे ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से क्रमशः)

जल-सेवन विधि

हमारे शरीर में जलीय अंश की मात्रा ५० से ६० प्रतिशत है । प्रतिदिन सामान्यतः २३०० मि.ली. पानी त्वचा, फेफड़ों व मूत्रादि के द्वारा उत्सर्जित होता है । शरीर को पानी की आवश्यकता होने पर प्यास लगती है । उसकी पूर्ति के लिए जितना आवश्यक है, उतना ही पानी पीना चाहिए । उससे कम अथवा अधिक पानी पीना, प्यास लगने पर भी पानी न पीना अथवा बिना प्यास के पानी पीना रोगों को आमंत्रण देना है ।

✻ आयुर्वेदोक्त जल-सेवन विधि ✻

१. भोजन के आरम्भ में पानी पीने से जठराग्नि मंद होती है व दुर्बलता आती है ।

२. भोजन के बीच-बीच में गुनगुना पानी पीना चाहिए । इससे अन्न का पाचन सहजता से होकर शरीर की सप्तधातुओं में साम्य बना रहता है व बल आता है । ठंडा पानी हानिकारक है । प्रायः भोजन के बीच एक ग्लास (२५० मि.ली.) पानी पीना पर्याप्त है ।

३. भोजन के तुरंत बाद पानी पीने से कफ की वृद्धि होती है व मोटापा आता है । भोजन के एक से डेढ़ घंटे बाद पानी पीना चाहिए ।

४. भोजन करते समय जठर का आधा भाग अन्न से व एक चौथाई भाग पानी से भरें तथा एक चौथाई भाग वायु के लिए रिक्त रखें ।

५. पचने में भारी, तले हुए पदार्थों का सेवन करने पर उनका सम्यक् पाचन होने तक बार-बार प्यास लगती है । उसके निवारणार्थ गुनगुना पानी ही पीना चाहिए ।

६. केवल गर्मियों में ही शीतल जल पीयें, बारिश व सर्दियों में सामान्य या गुनगुना जल ही पीयें ।

७. सूर्योदय से २ घंटे पूर्व रात का रखा हुआ आधा लीटर पानी पीना असंख्य रोगों से रक्षा करनेवाला है ।

८ रात को सोने से पहले उबालकर औटाया हुआ गर्म पानी पीने से त्रिदोष साम्यावस्था में रहते हैं । पानी को यदि ३/४ भाग शेष रहने तक उबालते हैं तो वह पानी वायुशामक हो जाता है । १/२ शेष रहने तक उबालते हैं तो वह पित्तशामक तथा १/४ शेष रहने तक उबालते हैं तो वह कफशामक हो जाता है ।

९. जब बायाँ नथुना चल रहा हो तभी पेय पदार्थ पीना चाहिए । दायाँ स्वर चालू हो उस समय यदि पेय पदार्थ पीना पड़े तो दायाँ नथुना बंद करके बायें नथुने से श्वास लेते हुए ही पीना चाहिए ।

१०. खड़े होकर पानी पीना हानिकारक है, बैठकर और चुस्की लेते हुए पानी पीयें ।

✻ विशेष ✻

✻ प्यास लगने पर पानी न पीने से मुँह सूखना, थकान, कम सुनाई देना, चक्कर आना, हृदयरोग व इन्द्रियों की कार्यक्षमता का ह्रास होता है ।

✻ आवश्यकता से अधिक जल पीने से आँतों, रक्तवाहिनियों, हृदय, गुर्दे, मूत्र नलिकाओं व यकृत (लीवर) को बिनजरूरी काम करना पड़ता है, जिससे उनकी कार्यक्षमता धीरे-धीरे कम होने लगती है । अधिक जल-सेवन अम्लपित्त (एसीडिटी), जलोदर, सिरसंबंधी रोग, नपुंसकता, सूजन, प्रमेह, संग्रहणी, दस्त का हेतु है ।

प्रतिदिन की कुल २३०० मि.ली. पानी की आपूर्ति हेतु डेढ़ लीटर पानी पीने में और लगभग ८०० मि.ली. पानी चावल, रसमय सब्जी, दाल, रोटी आदि के द्वारा भोजन के अंतर्गत लें । ऋतु, देश, काल, आहार, व्यवसाय, दिनचर्या आदि के अनुसार यह मात्रा परिवर्तित होती है । गर्मियों में अधिक जल की आवश्यकता की पूर्ति फलों के रस,

दूध, शरबत आदि के द्वारा की जा सकती है।

❊ अजीर्ण, गैस, नया बुखार, हिचकी, दमा, मोटापा, मंदाग्नि, पेट-दर्द व सर्दी-जुकाम होने पर पानी गर्म करके पीना चाहिए।

❊ दाह (जलन), चक्कर आना, मूर्च्छा, परिश्रमजन्य थकान, पित्त के विकार, शरीर से रक्तस्राव होना, आँखों के सामने अँधेरा छाना ऐसी अवस्थाओं में शीतल जल का सेवन हितकारक है।

❊ अति शीत जैसे फ्रीज या बर्फवाला पानी पीने से हृदय, पीठ व कमर में दर्द तथा हिचकी, खाँसी, दमा आदि कफजन्य विकार उत्पन्न होते हैं। ❑

१३ साल की उम्र में २४ पदक

पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में शत-शत नमन।

मैंने परम पूज्य बापूजी से १४ जनवरी १९९७ को मंत्रदीक्षा ली थी। मेरे परिवार में मेरी दो बेटियाँ और ससुरजी हैं, सबने बापूजी से दीक्षा ली है। गुरुमंत्र के जप से मेरी बड़ी बेटी शुभांगी (उम्र १८ वर्ष) की प्रतिभा ऐसी निखरी कि उसने राज्यस्तरीय और राष्ट्रीय तीरंदाजी प्रतियोगिताओं में २ स्वर्ण, १ रजत और ३ कांस्य पदक जीते। यह सब गुरुकृपा से ही सम्भव हो पाया।

पूज्य बापूजी से दीक्षा लेने के बाद मेरी छोटी बेटी शिवानी (उम्र १३ वर्ष) की प्रतिभा भी इतनी निखरी कि उसने केवल १० वर्ष की उम्र में 'मार्शल आर्ट नेशनल कराटे चैम्पियनशिप' में सुवर्ण पदक प्राप्त किया। इसके बाद उसने राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय (commonwealth) अनेक स्पर्धाओं में भाग लिया और कुल १७ स्वर्ण पदक, ४ रजत पदक, ३ कांस्य पदक हासिल किये हैं। १३ वर्ष की उम्र में २४ पदक जीतना, ये सारी सफलताएँ बापूजी के आशीर्वाद का ही फल हैं। ऐसे करोड़ों के उद्धारक प्यारे बापूजी को हमारे बारम्बार प्रणाम !

– श्रीमती स्मिता कराले, धार (म.प्र.)।

दूरभाष क्र. : ०७२९२-२३२९९२. ❑

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

पूज्यश्री के हरिद्वार एकांतवास के दौरान पौंटावासियों ने गुहार लगायी और ८ मई को पूज्य बापूजी **पौंटा आश्रम, जि. सिरमौर (हि.प्र.)** पधारे। **८ व ९ मई की सुबह तक** हुए सत्संग में पौंटा व आसपास के शहरों से आयी जनता लाभान्वित हुई और अपनी सुषुप्त योग्यताओं को जगाने की गुरुचाबी आत्मनिष्ठ गुरुदेव से पायी : ''आप जप से, सत्संग से अंतरात्मा की शक्तियाँ जागृत करो। संसार में दुःखी और परेशान होकर पशु की नाईं पच मरने के लिए मनुष्य-जीवन नहीं है। मंत्र-शक्ति से धीरे-धीरे प्रगति होती है। दुष्चरित्र से, दुर्व्यसन से अपने को बचाकर ब्रह्मज्ञानी गुरु का दिया हुआ मंत्र अर्थसहित जपते हुए उसमें स्थिर होओ।''

९ मई को पौंटावासियों से विदाई ले बापूजी जब **राजपुरा** की ओर चले तो मार्ग में अनेकों जगहों पर पूज्यश्री के दर्शन की ललक में भक्त-साधक पलक-पाँवड़े बिछाये खड़े थे। इन साधक भक्तों की प्रार्थना पर **चुहड़पुर कलाँ, यमुना नगर, हेमा माजरा** आदि जगहों पर भी सत्संग-प्रसाद बाँटते-बाँटते पूज्यश्री राजपुरा पहुँचे तो विशाल संख्या में राजपुरावासी बापूजी के दर्शन-सत्संग के लिए उत्सुक बैठे थे। आत्मनिरीक्षण-आत्मपरीक्षण की युक्ति से दुःखमुक्ति की समझ बढ़ाने की बात बताते हुए बापूजी बोले : ''रोगी कौन है ? रोगी तो करीब-करीब सभी हैं। कोई विरला नीरोग है लेकिन बलिहारी उसकी है जो रोगी होने पर भी 'मैं रोगी हूँ' ऐसा जान लेता है। शरीर के रोग इतना दुःख

नहीं देते जितना भीतर के रोग दुःख देते हैं। मन में रोग छुपे हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, चिंता आदि। जब भी कोई दुःख हो तो समझ लेना कि रोग का फल है, फिर चाहे वह शरीरगत दुःख हो, चाहे मनःगत दुःख हो, चाहे बुद्धिगत दुःख हो। रोग ही दुःख देता है।''

१० से १३ मई तक एकांतवास के दौरान **चंडीगढ़** की जनता को भी दर्शन-सत्संग का लाभ मिला।

१५ से १७ मई तक डोम्बिवली (महा.) में आयोजित सत्संग में अपार जनमेदिनी उमड़ पड़ी थी। दुनियावी फिसलाहटों से बचने के लिए सत्संग की, भगवान की शरण ही उपाय बताते हुए बापूजी ने कहा : ''जिसने सत्संग किया है, गुरुमंत्र की दीक्षा ली है उसके जीवन में भी कभी फिसलाहट देखी जा सकती है लेकिन भगवान उसे गिरने नहीं देते हैं। जैसे नारदजी के जीवन में फिसलाहट आयी पर भगवान ने गिरने नहीं दिया। रावण के जीवन में फिसलाहट आयी तो भगवान क्या करें, वह भगवान की शरण नहीं था, अहं की शरण था, काम की शरण था, क्रोध की शरण था, लोभ की शरण था।''

दरिया किनारे बसे इस क्षेत्र में हरिनाम संकीर्तन से भगवद्भाव का दरिया हिलोरे ले रहा था।

१७ तारीख तक डोम्बिवली में सत्संग सम्पन्न हुआ लेकिन चारों तरफ से आये भक्तों की भारी प्रार्थना और माँग रही तो चार दिन रायता आश्रम व **२२, २३ मई** दो दिन **भायंदर** में सत्संग हुआ। भायंदर की भीड़ देखके कुंभ मेले का नजारा स्मरण आ रहा था। डोम्बिवली भायंदर से कम नहीं, भायंदर डोम्बिवली से कम नहीं। धन्य है भक्तों की भक्ति, श्रद्धा और हयात महापुरुषों को परखने की प्रेमभरी दृष्टि ! जीवन जीने का श्रेष्ठ नजरिया देते हुए बापूजी ने कहा : ''ज्ञान बिना का कर्म अंधा है और कर्म बिना का ज्ञान पंगु है। जैसे पैर तो हों लेकिन आँखें नहीं हों तो क्या करेगा ? और बिना पैर का आदमी कहाँ जायेगा ? बातें करेगा बस - 'ऐसा है, ऐसा है... ।' देखो तो जीवन में कोई रस नहीं। अरे ! जीवन में आत्मरस होना चाहिए, आत्मानंद होना चाहिए। क्या मजदूर की नाईं घर साफ किया, दुकान किया, यह किया, वह किया और मजदूरी करके मर गये।

ऐसे कर्म करने चाहिए जो अपने लिए, दूसरों के लिए हितकारी हों। वासना से प्रेरित कर्म नहीं होना चाहिए। दूसरे को नीचा दिखानेवाला, वासना को बढ़ानेवाला कर्म नहीं होना चाहिए। भगवान की भक्ति, भगवान का ज्ञान अपने को और दूसरे को मिले - ऐसा कर्म अपनी सात पीढ़ियों को तार देता है। जिसके जीवन में सत्संग नहीं है, बड़ा दुर्भाग्य है उसके पीछे।''

२५ व २६ मई को पूर्णिमा-दर्शन **अहमदाबाद आश्रम** में सम्पन्न हुआ। पूज्यश्री ने पूनम व्रतधारी साधकों को सम्बोधित करते हुए कहा : ''जिसके जीवन में अच्छी बात का व्रत है, नियम है उसको समस्याएँ मजबूत बना देती हैं और जिसके जीवन में धर्म पर दृष्टि नहीं है, मोक्ष पर दृष्टि नहीं है उसका जीवन पशु-पक्षी की नाईं बहते-बहते नीच योनियों में चला जाता है।''

२७ मई को **रजोकरी (दिल्ली)** व **हरिद्वार** दो जगहों पर पूनम दर्शनार्थियों को दर्शन-सत्संग का लाभ मिला। दिल्लीवासियों को विवेक का प्रकाश देते हुए बापूजी बोले : ''कितना भी मुकरो लेकिन शरीर को लकड़ी की ढेरी पर जलाया जायेगा यह पक्की बात है। शरीर जलाया जाय उसके पहले आपके और भगवान के बीच का अंधकार मिटाया जाय, शरीर को आग लगे इससे पहले आपके और भगवान के बीच जो नासमझी का पर्दा है, अज्ञान है उसको ज्ञान की आग लगे। आधिभौतिक शरीर के लिए तो आधिभौतिक अग्नि चाहिए, अविद्या मिटाने के लिए ज्ञानाग्नि चाहिए।

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥

ब्रह्मज्ञान के सत्संग के द्वारा ज्ञानाग्नि आपके बुद्धिगत अज्ञान को मिटाती है।'' ❑
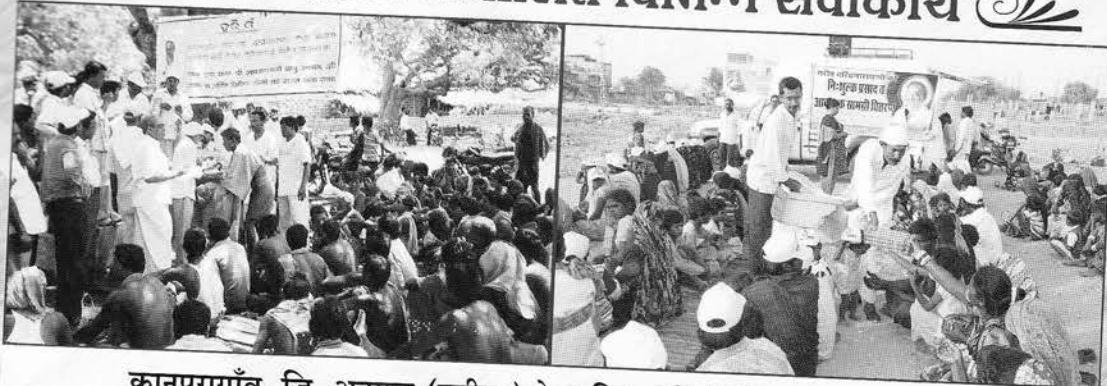
आश्रम द्वारा संचालित विभिन्न सेवाकार्य

कानपुरागाँव, जि. अनगुल (उड़ीसा) के अग्नि-पीड़ितों में राहत-सामग्री तथा जोधपुर (राज.) के गरीबों में मिठाई व टोपी का वितरण।

चिरमिरी, जि. कोरिया (छ.ग.) में वस्त्र तथा सोलापुर (महा.) के गरीबों, अभावग्रस्तों में अनाज-वितरण।

मोदीनगर, जि. गाजियाबाद (उ.प्र.) में मिठाई, बर्तनों का वितरण तथा मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) में बाल-भोज।

बरेली (उ.प्र.) में शीतल शरबत का वितरण व सम्बलपुर (उड़ीसा) के जेल में सत्संग-कीर्तन कार्यक्रम।
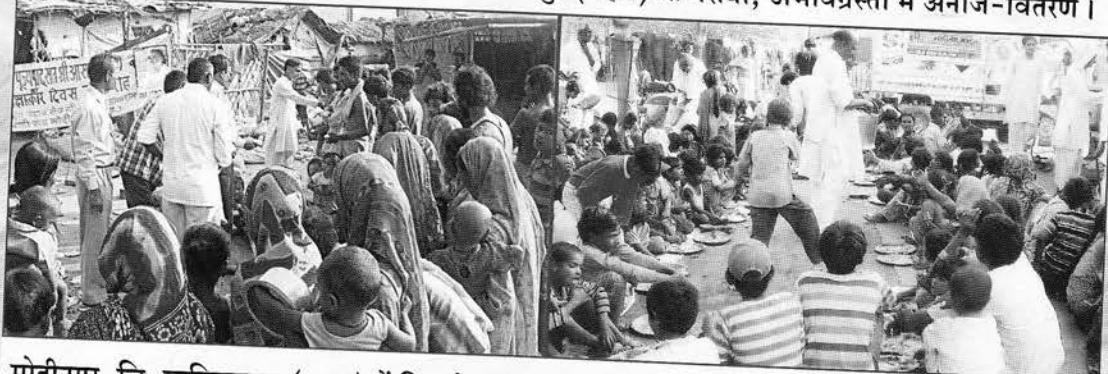
RNP. No. GAMC 1132/2009-11
(Issued by SSPOs Ahd, valid upto 31-12-2011)
WPP LIC No. CPMG/GJ/41/09-11
RNI No. 48873/91
DL (C)-01/1130/2009-11
WPP LIC No. U (C)-232/2009-11
MH/MR-NW-57/2009-11
MR/TECH/WPP-21/NW/2010
'D' No. MR/TECH/47.4/2010
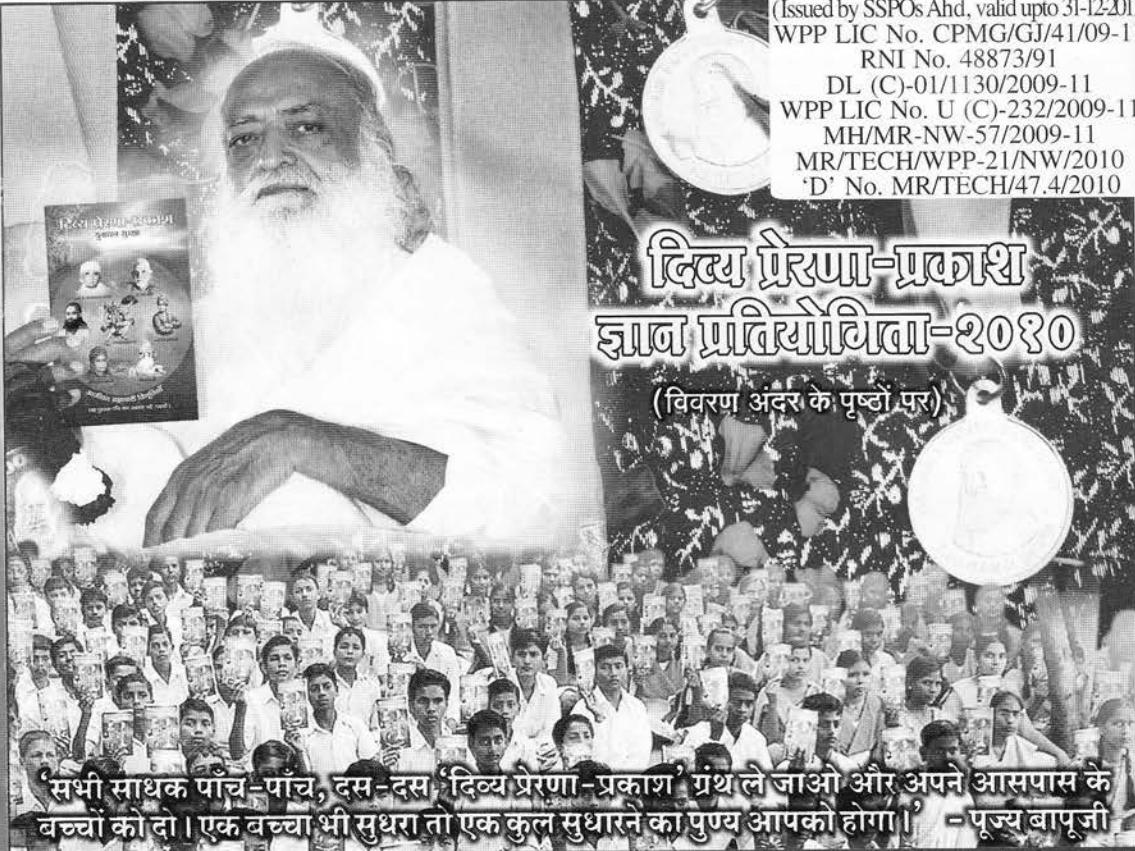
संत-सान्निध्य की शीतल छाया में बाहर की तपन भुलाकर अपने हृदय को भगवद्ज्ञान, माधुर्य से पावन बनाते डोंबिवली (महा.) के लाखों-लाखों श्रद्धालु-भक्त।
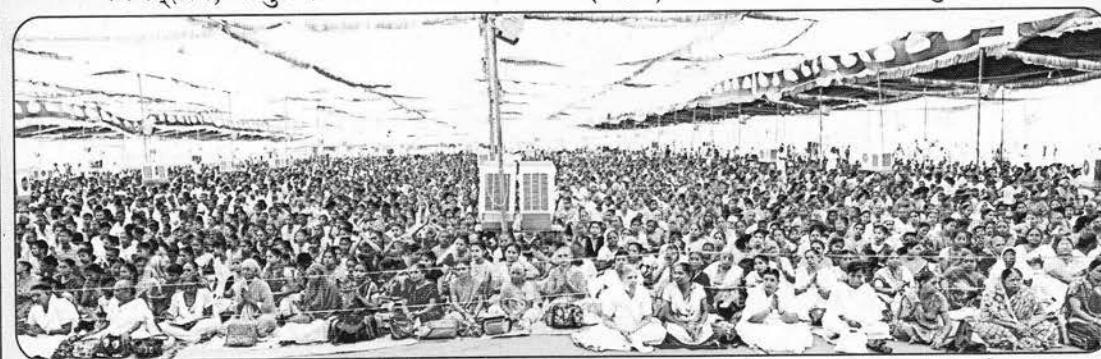
भायंदर (महा.) में पूज्य बापूजी की सत्संग-सुधा का रसपान करने उमड़ा विशाल जन-सैलाब।

Posting at PSO Ahmedabad between 1st to 17th of every month. * Posting at ND PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.